श्री समवशरण विधान

आशीर्वाद

समधिस्थ परम पूज्य आचार्य 108
श्री विद्या भूषण सन्मति सागर जी महाराज
एवं
समधिस्थ सराकोद्धारक आचार्य 108
श्री ज्ञान सागर जी महाराज

आधारित मन्त्र

स्व. कविवर श्री कुंवर लाल जी

रचयित्री

परम् पूज्य विदुषी लेखिका
गणिनी आर्यिका रत्न 105 श्री स्वस्ति भूषण माता जी

प्रकाशक

श्री स्वस्ति कल्याण समिति (रजि.)

कृति : **श्री समवशरण विधान**
कृतिकार : **आर्यिकारत्न 105 श्री स्वस्ति भूषण माता जी**
षष्टम संस्करण : **1100 प्रतियाँ**
प्रकाशन वर्ष : **2015**
न्यौछावर राशि : **35.00 मात्र (पुनप्रकाशन हेतु)**

प्रकाशक

श्री स्वस्ति कल्याण समिति (रजि.)

प्रारूप सहयोगी—स्वराज कुमार जैन, फरीदाबाद

प्राप्ति स्थान :—

1. **स्वराज कुमार जैन, अध्यक्ष श्री स्वस्ति कल्याण समिति रजि.**
   म. न. 2, ब्लाक—22, स्प्रिंग फील्ड कालोनी, फरीदाबाद
   दूरभाष : 0129—4144329, 09868345768
2. **राहुल जैन, सचिव**
   श्री स्वस्ति कल्याण समिति (रजि0)
   मंत्री श्री दिगम्बर जैन समाज गुलाब वाटिका
   दूरभाष : 09212155167, 09212515167
3. **श्री जैन साहित्य सदन**
   लाल मंदिर, चांदनी चौक, दिल्ली
   दूरभाष : 09311168299, 011—23253638
4. **श्री आदिनाथ सेवा संस्थान**
   श्री सोनागिर सिद्ध तीर्थ क्षेत्र, दतिया (मध्य—प्रदेश)
5. **श्री 1008 मुनिसुव्रत नाथ दिगम्बर जैन अतिशय क्षेत्र स्वस्तिधाम**
   शाहपुरा रोड़, जहाजपुर, जिला भीलवाड़ा, राजस्थान 9782063107

web site : www.jainswastisandesh.com
link to facebook: swastibhushan mataji

मुद्रक : नवकार प्रिंटर्स, दिल्ली—110094
मो. : 09818812970, 09958471371
e-mail : navkarprinters502@gmail.com

समवशरण का स्वरूप

समवशरण तीर्थंकरों की ऐसी धर्म उपदेश सभा है जिसमें पशु–पक्षी, देव–मनुष्य, ऊंच–नीच, धनी–निर्धन, शत्रु–मित्र, पापी–पुण्यात्मा सभी एक साथ बैठकर आत्मकल्याणकारी उपदेश सुनते हैं। बड़े–बड़े राजकीय और सामाजिक नेता भी इस सभा में सम्मिलित होकर अपनी जटिल समस्याओं का समाधान प्राप्त करते हैं। आचार्य जिनसेन ने बताया है कि जब चक्रवर्ती भरत के मन में कोई शंका उत्पन्न होती, तो वे आदि तीर्थंकर ऋषभदेव के समवशरण में जाकर अपनी शंका का समाधान करते हैं। समवशरण ऐसी सामाजिक संस्था है जिसकी शरण में सभी प्रकार के लौकिक नेता पहुँचते हैं। वास्तव में धर्म नेता ऐसा लोकनायक होता है जो निःस्वार्थ और निष्काम भाव से जनहित का उपदेश देता है। शील, संयम, सदाचार, व्यवस्था, मान–मर्यादा एवं सहयोग की भावना ही सामाजिकता का निर्वाह करने में समर्थ होती है।

उच्च आदर्शों की स्थापना एवं वैयक्तिक जीवन में विकार संशोधन भी इसी प्रकार की संस्थाओं से सम्भव है।

पौराणिक मान्यतानुसार समवशरण की रचना देवों द्वारा सम्पन्न होती है। कुबेर, सौधर्म इन्द्र की आज्ञा से भगवान की धर्मसभा की अद्भुत, दिव्य एवं अभूतपूर्ण संरचना करते हैं। आचार्य कहते हैं–

सुरेन्द्र नील निर्माणं समवृत्तं तदा बभो।
त्रिजगच्छ्रीमुखालोक मंगलादर्श विभ्रमम्।।

अर्थ – इन्द्र नीलमणी से निर्मित तथा चारों ओर से गोलाकार वह समवशरण ऐसा लगता था मानो त्रिलोक की लक्ष्मी के मुखदर्शन का मंगलमय दर्पण ही हो।

दिव्यध्वनि के द्वारा ही सर्व जीवों को धर्ममार्ग का ज्ञान होता है। धर्मतीर्थ का प्रवर्तन होता है। दिव्यध्वनि के विशेष विचार मृदु, मधुर, अति गम्भीर और एक योजन प्रमाण समवशरण में रहने वाली बारह प्रकार की सभाओं में विद्यमान देव, मनुष्य और तिर्यंचादि सब संज्ञी भव्य जीवों को युगपत् प्रतिबोधित करने वाले होते हैं जैसे मेघ का पानी एक रूप है तो

भी वह नाना वृक्ष और वनस्पतियों में जाकर नाना रूप परिणत हो जाता है उसी तरह दाँत, तालु, ओष्ठ और कण्ठ आदि के हलन–चलन से रहित वह वाणी 18 महाभाषा 700 क्षुद्र (लघु) भाषाओं में परिणत होकर समस्त भव्यों को आनन्द प्रदान करती है। "अर्ध मागधी" यह नाम भाषा रूप है।

धर्मचक्र–भगवान जब विहार करते हैं तो उस समय हजार आरों वाला धर्मचक्र भगवान के आगे–आगे चलता है।

अष्टप्रातिहार्य–तीर्थंकर भगवान् का समवशरण अष्ट प्रातिहार्यों से समलंकृत है वे निम्न प्रकार हैं–(1) सिंहासन (2) पुष्पवृष्टि (3) अशोक वृक्ष (4) छत्रत्रय (5) 64 चमर (6) देव दुन्दुभि (7) भामण्डल एवं (8) दिव्य ध्वनि।

तीर्थंकर भगवान समवशरण में अष्ट प्रातिहार्य से समलंकृत है।

समवशरण पूजन विधान की रचना के भाव मेरठ में मई 2004 में उत्पन्न हुए। पंच परमेष्ठी को नमन कर गुरुवर आचार्य विद्याभूषण सन्मति सागर जी महाराज के पावन चरणों में नमोस्तु कर लेखनी प्रारम्भ हुई, जो हरिद्वार में चातुर्मास हेतु विहार करते हुए मार्ग में लेखनी को विराम न देते हुए हरिद्वार की पावन धरा पर सम्पूर्ण हुई।

समवशरण पूजन विधान रचना में प्रस्तुत पंक्तियों में समवशरण की महिमा का गुणगान करने का प्रयास किया है और कहा है–

तीर्थंकर महावीर के समवशरण में मुख्य रूप से मगध सम्राट श्रेणिक, प्रमुख गणधर गौतम स्वामी से साठ हजार प्रश्न करते हैं। अपनी जिज्ञासाओं का समाधान पाकर सन्तुष्ट होते हैं।

तीर्थंकर वन में जाकर सभी परिग्रहों का त्याग करते हैं। तपश्चरण के पश्चात् चारों घातिया कर्म। (ज्ञानावरणीय, दर्शनावरणीय, मोहनीय, वेदनीय) का घात कर केवल ज्ञान को प्राप्त करते हैं। सौधर्म इन्द्र को जब ज्ञात होता है कि भगवान को केवलज्ञान की उत्पत्ति हुई है तब वे कुबेर को आज्ञा प्रदान करते हैं कि तुम तीर्थंकर की दिव्य ध्वनि सुनने के लिए समवशरण की रचना करो। कुबेर आज्ञा का पालन कर सुन्दर समवशरण की रचना करते हैं। गणधर के समक्ष ही तीर्थंकर की दिव्य ध्वनि खिरती है।

–आर्यिका स्वस्ति भूषण

श्री समवशरण विधान प्रस्तावना

समवशरण में राजते, तीर्थंकर भगवान।
पूजन भक्ति मैं करूँ, बारंबार प्रणाम।।
चतुर्मुखी होकर दिखें, दर्श करे हर जीव।
परम पिता के दर्श से, हो सम्यक की नींव।।
तीर्थंकर के दर्श से, तन–मन सब हुलसाय।
आत्म संपदा प्राप्त हो, चरणन शीश झुकाय।।
पुण्य उदय कब आयेगा, हे जिनवर जिनदेव।
हमको होगा दर्श कब, करूँ आपकी सेव।।
समवशरण पूजन करूँ, समवशरण में आन।
यही भावना है मेरी, बारंबार प्रणाम।।

छंद–भुजंग प्रयात (नेरन्द्रं फणीन्द्रं)
करी है तपस्या करम दुष्ट भागे,
फिर दिव्य ज्ञान का दीप प्रकाशे।
चहुं दिश है फैला धरम का उजाला,
भव्यों के कण्ठों में भक्ति की माला।
त्रिभुवन पति की हम पूजा रचायें,
भक्ति का अमृत आओ हम पिलायें।
स्वर्गों के इन्द्रों ने पूजा रचाई,
जय–जय उचारे और जयमाल गाई।

शेर चाल (दे दी हमें आजादी. . .)
प्रभु घातिया को घात पूर्ण ज्ञान ले लिया।
सौधर्म इन्द्र के सिंहासन को हिला दिया।।
हो मग्न इन्द्र ने विचारा अवधिज्ञान से।
जब हुआ ज्ञान किया नमन भक्ति भाव से।।1।।

स्वर्गों के सभी देवों को है पास बुलाया।
आज्ञा करी प्रभु दर्श का है ज्ञान कराया।।
हर्षित कुबेर से कहा समवशरण बनाओ।
सुंदर सभी कोठे में वहां रत्न लगाओ।।2।।

पाकर कुबेर आज्ञा को प्रभु पास में आया।
करके नमन मनहारी समवशरण बनाया।।
मानुष तिर्यंच देव सभी दर्श को आए।
जिनवर सभा के मध्य में हमें दर्श दिखाए।।3।।

योजन है बारा आदिनाथ का समवशरण।
क्रम–क्रम से घट के होता है वो एक ही योजन।।
आकार गोल सुंदर सुखकारी धाम है।
जिन ठाठ हो उसके वहां जो लेत नाम है।।4।।

दोहा
जिनवर की छवि मोहनी, मोहे उनका ज्ञान।
आकर हम पूजा करें, हमको दो वरदान।।
समवशरण पूजा करें, मिले मुक्ति का राज।
इन्द्र समान वे नर भये, नमता सकल समाज।।

प्रस्तुति

चौपाई

पंचम गति पंचम ज्ञान पाये,
शुभ समवशरण शोभा बढ़ाये।
शत इन्द्र चरण वंदन करते,
मन वच तन से सेवा करते।।
तिष्ठे सिंहासन पर जु आप,
उपदेश सुने मिट जाए ताप।
चौंसठ शुभ चमर ढुराय देव,
इंद्रादिक तिनकी करत सेव।
तुम छत्र तीन फिरते हैं शीश,
तीनों लोकों के आप ईश।
भामंडल की आभा अपार,
हो सूर्य चंद्र की द्युति असार।।
सब शोक नष्ट करता अशोक,
तुम दर्श से भागे रोग शोक।
चतुबार दिव्य ध्वनि सुनत भव्य,
जा नहि सकते हैं वहां अभव्य।।

श्री समवशरण विधान

समुच्चय पूजा

स्थापना (त्रिभंगी छंद)

चौबिस जिनवर, छवि है मनहर, भक्तों के मन भाती है।
जिन समवशरण को, प्रभु चरण को, दृष्टि लख हर्षाती है।।
नित करूँ मैं पूजा, काम न दूजा, समवशरण में मैं आया।
मन हृदय पधारो, काज संवारो, आव्हानन करने आया।।

दोहा

भक्त पुकारें तुम्हें प्रभु, देते हैं आवाज।
आकर दर्शन दो हमें, करते हैं हम आश।।

ॐ ह्रीं चतुर्विंशति जिनेन्द्राः अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननं, अत्र तिष्ठ–तिष्ठ ठः ठः स्थापनं, अत्र मम् सन्निहितौ भव–भव वषट् सन्निधिकरणं।

शंभू – छंद

हूँ जनम–जनम का प्यासा मैं, जल से नित प्यास बुझाता हूँ।
पर प्यास न मेरी शांत हुई, इसलिए मैं जल ले आता हूँ।।
चौबीसों प्रभु के समवशरण में, भक्ति भाव भरकर आया।
मुझको भी दर्शन शीघ्र मिले, यह आश हृदय में ले आया।।

ॐ ह्रीं चतुर्विंशति जिनेन्द्रेभ्यो जन्म जरा मृत्यु विनाशनाय जलं निर्व. स्वाहा

जग में कर्मों का ताप मिला, शीतलता की फिर चाह हुई।
चंदन को शीतल है माना, आतम की न परवाह हुई।।
चौबीसों . . .

ॐ ह्रीं चतुर्विंशति जिनेन्द्रेभ्यो भवाताप विनाशनाय चन्दनं निर्व. स्वाहा

सारा ही जग पद पाने को, पुरुषार्थ, निरंतर करता है।
पर अक्षय पद अविनाशी है, आनंदित आतम करता है।।
चौबीसों . . .

ॐ ह्रीं चतुर्विंशति जिनेन्द्रेभ्यो अक्षय पद प्राप्तये अक्षतान् निर्व. स्वाहा

शुभ भावों से हमें दूर करा, यह काम अशुभ करवाता है।
पूजन को पुष्प मैं ले आया, जो अशुभ कर्म हरवाता है।।
चौबीसों प्रभु के समवशरण में, भक्ति भाव भरकर आया।
मुझको भी दर्शन शीघ्र मिले, यह आश हृदय में ले आया।।

ॐ ह्रीं चतुर्विंशति जिनेन्द्रेभ्यो काम बाण विनाशनाय पुष्पं निर्व. स्वाहा

भोजन करके फिर भूख लगे, न तृप्ती इससे पाई है।
नैवेद्य बनाकर ले आया, तेरी छवि मुझको भाई है।।
चौबीसों . . .

ॐ ह्रीं चतुर्विंशति जिनेन्द्रेभ्यो क्षुधारोग विनाशनाय नैवेद्यं निर्व. स्वाहा

उजियारा बाहर करता हूँ, अज्ञान अंधेरा है छाया।
प्रभु ज्ञान दीप की ज्योति जगे, इसलिए दीप मैं ले आया।।
चौबीसों . . .

ॐ ह्रीं चतुर्विंशति जिनेन्द्रेभ्यो मोहांधकार विनाशनाय दीपं निर्व. स्वाहा

कर्मों ने सुखी दुखी कीना, कर्मों ने जग भरमाया है।
कर्मों का धुआं उड़ाने को, वन्हि में धूप जलाया है।।
चौबीसों . . .

ॐ ह्रीं चतुर्विंशति जिनेन्द्रेभ्यो अष्टकर्म विनाशनाय धूपं निर्व. स्वाहा

रसदार सरस फल खाने पर, ये मन आनंदित होता है।
मुक्ति फल जैसा स्वाद नहीं, मुक्ति फल अनुभव होता है।।
चौबीसों . . .

ॐ ह्रीं चतुर्विंशति जिनेन्द्रेभ्यो अष्टकर्म विनाशनाय फलं निर्व. स्वाहा

मद राग द्वेष को दूर किया, फिर मोह का जाला तोड़ा है।
सब आधि–व्याधि से रहित आप, सारे जग से मुँह मोड़ा है।।
कर्मों के पर्वत चूर किए, निज से ही नाता जोड़ा है।
श्रद्धा से अर्घ्य बना लाए, हमने निज मोह मरोड़ा है।।
चौबीसों . . .

ॐ ह्रीं चतुर्विंशति जिनेन्द्रेभ्यो अनर्घ पद प्राप्ताय अर्घ निर्व. स्वाहा

जयमाला

ज्ञानावरण का नाश कर, केवल ज्ञान को पाये।
अनंत चतुष्टय के धनी, शत्–शत् शीश झुकाये।।
समवशरण वैभव महा, चौबीसों जिनराय।
मूलगुण छ्यालीस हैं, नमूँ तुम्हारे पाये।।

पद्धरि छंद

सुंदर शरीर रचना महान, जन्मत ही दस अतिशय प्रमान।
ज्यों जन्म लेय सौधर्म आये, ऐरावत हाथी पर बिठाये।।1।।
पांडुक वन में अभिषेक किया, सबने सुख अमृत पान किया।
तन वज्रमयी पाया शरीर, है रूधिर श्वेत बहता है क्षीर।।2।।

सम चतुरस्त्र संस्थान पाये, तन पर न पसीना जरा आये।
तन उड़ती है शुभ गंध ज्ञान, इक सहस आठ लक्षण बखान।।3।।
हित मित प्रिय वच अमृत गिराये, शक्ति अनंत तन में जु आये।
दश अतिशय जन्मत सदा होय, भक्तों के जो सब करम खोय।।4।।
ज्यों केवलज्ञान का दीप जले, त्यों दश अतिशय की हवा चले।
शत कोश न हो दुर्भिक्ष कहीं, फिर मंद–मंद भी पवन बही।।5।।
जीवों का वध भी नहीं होय, आहार न ले जिनवर भी कोए।
अब होगा न उपसर्ग कभी, चारों दिशा में मुख दिखे सही।।6।।
ईश्वर विद्या के हुए आप, तन छाया नहि हम करें जाप।
विद्याओं ने ईश्वर माना, तन छाया ने छोड़ा बाना।।7।।
पल–पल में पलक न उठे–गिरे, नख केश भी अब तो नाहिं बढ़े।
दश अतिशय केवल ज्ञान पाऐ, चौदह देवों कृत है बनाऐ।।8।।
भाषा है अर्द्धमागधी जान, मैत्री आई जीवों के प्राण।
सारी ऋतु के फल एक साथ, दर्पण बन पृथ्वी भयी पाथ।।9।।
सब जीवों को आनंद होय, वायु में गंध सुगंध होय।
पथ से कांटे अरू धूल हटी, गंधोदक बरसे मेघ छटी।।10।।
चरणों तल पंकज को रचाए, द्वि सहस द्वि पंच कमलों को लाये।
देवों ने जय–जयकार करी, वाणी में सबके क्षमा भरी।।11।।
आगे–आगे यह धर्म चक्र, है चौदह अतिशय देवकृत्य।
अठ प्रातिहार्य भी साथ रहे, प्रभु की शोभा को बढ़ा रहे।।12।।
सब शोक नष्ट करता अशोक, नभ से वृष्टि पुष्पों की थोक।
वाणी की अमृत धार बहे, जय चौंसठ चमर ढुराय रहे।।13।।
रत्नों से खचित सिंहासन है, जय भामंडल का भासन है।
गंभीर नाद दुंदुभि होय, सर छत्र तीन शोभित ये होय।।14।।
अठ प्रातिहार्य शोभा को पाये, जय अनंत चतुष्टय सुनो गाय।
अंतर अनंत का ज्ञान हुआ, उस ज्ञान ने लोका लोक छुआ।।15।।
दर्शन पाया तुमने अनंत, जीवों को दिखाया मुक्ति पंथ।
पाया है सौख्य ही आतम का, जिन ध्यान लगा परमातम का।।16।।
शक्ति अनंत के बने वीर, कर्मों पर अपना चला तीर।
दश–दश चौदह वसु चार जान, छ्यालीस मूलगुण हैं प्रमाण।।17।।

ऐसे प्रभु की हम भक्ति करें, तप त्याग क्षमा से धर्म धरें।
किरपा कीजे मोहि दीन जान, 'स्वस्ति' ने पकड़े चरण आन।।18।।

दोहा

मूलगुण छ्यालीस की, सुंदर माल बनाय।
भविजन कंठ में धारिये, शत–शत शीश नवाय।
ॐ ह्रीं चतुर्विंशति जिनेन्द्रेभ्यो जयमाला पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
समवशरण सु विधान को, भाव सहित करवाय।
मुक्ति सुख समृद्धि हो, शत–शत शीश झुकाए।।
इत्याशिर्वाद परिपुष्पांजलिं क्षिपेत्

अर्घ्यावली

दोहा

विजय द्वार पूरब दिशा, अतिशय, सुन्दर जान।
चौंक आगे सोपान है, जपूँ तुम्हारा नाम।।

ॐ ह्रीं पूर्व दिशायां विजय नामक द्वाराग्रे विद्यमान चतुष्कस्याग्रे सोपानसंयुक्त–समवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।1।

वैजयन्त है हार सम, है जयन्त गुणवान।
कर प्रवेश जिनवास में, करते चरण प्रणाम।।

ॐ ह्रीं चतुर्दिक्षु चतुर्द्वाराणाम् अग्रे चतुष्कस्याग्रे चतुः सोपानसंयुक्त – समवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।2।

ऋषभ देव जिनागार में, सीढ़ी बीस हजार।
एक हस्त ऊँची कही, नमूँ मैं बारंबार।।

ॐ ह्रीं श्रीऋषभदेवस्य विंशतिसहस्त्रहस्तोच्च – एक हस्तायत्रैककोशायाम सोपानसंयुक्त – समवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।3।

समवशरण तेईस का, क्रम–क्रम घटता जाये।
हीरा मणि मुक्ता लड़ी, शोभा कही न जाये।।
चार हस्त का एक धनु, हाथ हैं बीस हजार।
ऊँचा पंच सहस्त्र है, समवशरण तैयार।।

ॐ ह्रीं अन्तिमत्रयोविंशति तीर्थंकराणां यथाविधिहीनहीन सोपानसंयुक्त

– समवशरणस्थित जिनेन्द्रेभ्यः अर्घ्यं।4।

दोनों ओर सीढ़ी बनी, वेदी सुन्दर जान।
भक्ति भाव समभाव से, चरणन करूँ प्रणाम।।

ॐ ह्रीं चतुर्हस्तानाम् एकं धनुर्मत्वा मध्यभूमितः पंचसहस्त्रधनुः प्रमाणोच्च समवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।5।

रतनमयी वेदी बनी, बैठक सुन्दर जान।
समवशरण शोभा बढ़े, प्रभु का हो गुणगान।।

ॐ ह्रीं श्रीऋषभदेवस्य सार्धसप्तशतधनुःस्थल सोपान वेदिकासंयुक्त – समवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।6।

(गीता छंद)

वेदी शोभा है बढ़ाती, देख प्रभु भक्ति बढ़े।
है कमल पांखुरी खूब सुंदर, देव दर्श को हैं खड़े।।
शुभ ज्योति जगमग हो रही, सुख पा रहे सब जीव हैं।
सात शत पंचाशतों का, धनुष प्रमाण अतीव है।।

ॐ ह्रीं वेदिकायाः नानाविधरचनासम्पन्नचतुष्क पीठसंयुक्त – समवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।7।

यत्र छत्र जहां लगा है, छाया प्रभु पर शोभती।
गोल कलशा गोल जिनगृह, स्वयं शोभा बोलती।।
मनःथम्भ सहित है विष्ठर, यह प्रथम ही आवता।
जिनराज की भक्ति करे वो, मोक्ष पद को पावता।।

ॐ ह्रीं वेदिकोपरि मूलविषें सूची 750 धनुष, चूलिकास्थल में लघुसूचीप्रमाण गोलाकार कूटस्थ देवीदेवकृत जिनगुणगानसंयुक्त–समवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।8।

द्वितीय बैठक द्वार चतु हैं, स्वर्ण के रत्नों जड़े।
पर प्रभु की शोभा लख के, ये सभी फीके पड़े।।
भक्तों की ये सब भावना, स्वीकार प्रभु जी कीजिये।
हम नेत्र नीचे करके बैठे, दृष्टि हम पर दीजिये।।

ॐ ह्रीं ऊपरि कलशयुक्त छत्रिकायुक्त अधः स्तम्भसहित प्रथमविष्ठर संयुक्त – समवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।9।

द्वार वसु सुंदर बताये, खम्भ भी वसु जानिये।
तीन गुमठी ग्यारा कलशा, प्रभु की आज्ञा मानिये।।
इन्द्र की आज्ञा मिली तब, जिन महल तैयार है।
स्वर्ग का वैभव है आया प्रभु चरण से प्यार है।।

ॐ ह्रीं पूर्व दिशा द्वितीयविष्ठरसंयुक्त – समवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं ।10।

(चौपाई)

बैठक में बैठे हैं जिनवर, मूरत सूरत प्यारी मनहर।
जिनकी शोभा वरणी न जाये, गणधर इन्द्र भी शीश झुकाएं।।

ॐ ह्रीं अष्ट अष्ट स्तम्भयुक्त त्रित्रि गुमठियोपरि एकादश – एकादश कलशयुक्त अष्ट द्वारयुक्तवेदिकासंयुक्त – समवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं ।11।

पंच सहस ऊँचा बतलावे, बैठक मणिमय लख हर्षावे।
प्रथम भूमि में विजय द्वार है, चार चौक शोभा अपार है।।

ॐ ह्रीं वेदिकोपरि बहुविष्ठरसंयुक्त समवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं ।12।

चार चौक चांदी बरसावे, बैठक मणिमय लख हर्षावे।
मध्य जनों तर चौंक विपुल है, चित्र बने सुकुमाल सुकुल है।।

ॐ ह्रीं समभूमितः पंचसस्त्रचापोन्नत विजयद्वारस्य अग्रे चतुष्क (चौक) संयुक्त – समवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं ।13।

पद्धरि छंद

भक्तिमय सारा देश हुआ, भक्तों ने आतम सौख्य लिया।
सब देव देवियां नृत्य करे, प्रभु के सिर पर शुभ चमर ढुरे।।

ॐ ह्रीं चतुष्कस्याग्रे पार्श्वद्वये विष्ठरेषु मध्ये नानाविधरचनायुक्त चतुष्कसंयुक्त – समवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं ।14।

द्वारे पे बंधन वार बंधे, रतनों की माल से द्वार सजे।
चहुं ओर ध्वजा फहराय गई, भक्तों के मन को भाय गई।।

ॐ ह्रीं बैठक विष्ठर सोपानवेदिकामत्तवारणावारक शोभासंयुक्त – समवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं ।15।

देवों ने तव यशगान किया, ध्वज रत्नमयी फहराय दिया।
झूमे नाचे वे नृत्य करें, हर अंग–अंग से भक्ति झरें।।

ॐ ह्रीं रत्नमुक्तानिर्मित सकम्पबहुध्वजासंयुक्त – समवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं ।16।

सीढ़ी पर चढ़ नहि थकते हैं, नहि देर जरा भी करते हैं।
अतिशय यह देवों कृत होता, दर्शन कर कर्मों को खोता।।

ॐ ह्रीं जिनातिशयतः यत्सोपानानि खेदं बिना क्षणमात्र चटनसमर्थानि एवम्भूतनीलमणि – निर्मित द्वादशयोजनवर्तुशिला संयुक्त – समवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं ।17।

आदि का बारह योजन था, अंतिम योजन बस एक हि था।
तेईस का क्रम–क्रम से घटता, निर्मल शिव वैभव वहां सजता।।

ॐ ह्रीं अन्तिमत्रयोविंशतितीर्थंकराणाम् उत्तरोत्तरहीनरचना परिमाण विशिष्टशिलासंयुक्त – समवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं ।18।

है गोल–गोल शुभ समवशरण, फिर आया धूली साल कोट।
आया जो प्रभु के चरणों है, भागे सब उसके रोग शोक।।
रतनन को चूरा इन्द्रों ने, वह इन्द्रधनुष की कांति धरे।
काला पीला रंग पंचपर्ण, इससे बैठक में चौंक पूरे।।

ॐ ह्रीं पंचविधचूर्णनिर्मित – गगनविसारिज्योतिर्युक्त धूलिसाल दुर्गसंयुक्त – समवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं ।19।

प्रभु के वपु से चौगुना ऊंचा, है कोट वहां का होता है।
दो भाग मोटी वह हो करके, कर्मों के पर्वत खोता है।।

ॐ ह्रीं जिनशरीरतः चतुर्गुणोच्च – मूलभागद्वयस्थूल उपरिक्रमशः सूक्ष्मधूलिसालदुर्ग (कोट) संयुक्त – समवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं ।20।

हैं चार द्वार और चार कोट, वैजयन्त जयन्त है आदि करे।
कंगूरा उन पर शोभित है, आते – जाते सब भव्य रहे।।

ॐ ह्रीं चतुर्दिक्षु कंगूरागुरजबैठकसंयुक्त – समवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं ।21।

तीनों लोकों के चित्र बने, लख वहां भव्य शिक्षा लेते।
नरकों का रस्ता तज करके, मुक्ती की राह पकड़ लेते।।

ॐ ह्रीं नानाविधिचित्रावसिसंयुक्त – समवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं ।22।

हैं गली चार सीढ़ी संग में, मणियों की शिला वहां शोभे।
देवों की यह सुंदर रचना, भव्यों का अति ही मन मोहे।।

ॐ ह्रीं वृषभदेव कोशैकायतत्रयोविंश्याति त्रिकोशआयाम सोपानचतुर्गलिषु उभयतः स्फटिकमणिमयवेदिका संयुक्त – समवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं ।23।

दोहा

हर वेदी के बीच में, चौड़ा है स्थान।
जिनवर की पूजा करें, बारंबार प्रणाम।।

ॐ ह्रीं अन्तिमत्रयोविंशतितीर्थंकराणाम् यथागमक्रमहीन वेदिका संयुक्त–समवशरणस्थित जिनेन्देभ्यो अर्घ्यं ।24।

अडिल्ल छंद

सुंदर भाव हुए प्रभु के दर्श से।
मन भी पावन हुआ प्रभु स्पर्श से।।
लम्बी वेदी गली एक सी जानना।
तेईस की क्रम – क्रम से हानि मानना।।

ॐ ह्रीं चतुर्वीथिकानांमध्ये अन्तरालभूमौ चतुर्णां दुर्गाणां पंचानां वेदिकानाम् अन्तरालेऽष्टानां भूमिशिलानां पर्यन्ते धूलिशालदुर्ग संयुक्त–समवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं ।25।

समवशरण की अष्ट भूमि को जानिये। सबसे अंत में धूलिसाल को मानिये।
चार गली के मध्य चतु अंतर हुआ। हुआ उसे शुभ ज्ञान जिन्हों अंतर छुआ।।

ॐ ह्रीं जिनदेहाच्चतुर्गुणोच्च भित्तिकासमसमायत पंचवेदिकाभिः उपर्युपरि क्रमहीनायाम तथोच्चदुर्गेश्य सुयुक्त – समवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं ।26।

कोट के नीचे बनी मनोहर वेदिका। कोट चौगुना रूप आपका शोभता।।
मैं भी दर्श करूँ यही है भावना। जागे आतम ज्ञान यही है कामना।।

ॐ ह्रीं पंचवेदिका – चतुर्दुर्गाष्टान्तरालेषु नानाविधिचित्ररचना संयुक्त – समवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं ।27।

स्वर्णमयी है वेदी और मणियों भरी। कंगूरों से शोभा उसकी औ बढ़ी।।
ध्वज फहराकर गीत धर्म के गावते। दर्शन करने प्रभु के नित हम आवते।।

ॐ ह्रीं कंगूरा मंदिर ध्वजा सुशोभिताभिः कंचनवर्णपंचवेदिकाभि संयुक्त – समवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं ।28।

शंभू छंद

शुभ समवशरण में वसुभूति, शोभा को और बढ़ाती है।
भू चैत्य खातिका पुष्प वाटिका, पवनों से लहराती है।।
उपवन ध्वजा और कल्पवृक्ष से, मनवांछित फल पाते हैं।
अष्टम भू में सभा प्रभु की, ज्ञानामृत बरसाते हैं।।

ॐ ह्रीं चतुर्दिक्षु वसुभूमि संयुक्त – समवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं ।29।

दोहा

चार कोट के मध्य में, पंच वेदिका जान।
अतिशय ज्ञान की धार है, बारंबार प्रणाम।।
पंच वेदी चतु कोट है, नवद्वारों को जान।
चतु दिशा में छत्तीस हैं, करते तुम्हें प्रणाम।।

ॐ ह्रीं चतुर्दिक्षु चतुर्दुर्ग – पंचवेदिका – षट्त्रिंशद्द्वार संयुक्त – समवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं ।30।

प्रथम कोट वेदी प्रथम, प्रथम गली में द्वार।
प्रथम की पूजा प्रथम में, प्रथम मुक्ति का द्वार।।

ॐ ह्रीं प्रथमदुर्ग – प्रथमवेदिकाद्वाराणां मध्ये प्रथमवीथिकाभूमि भिन्नद्वाराणां मध्ये द्वितीयादिवीथिकाभूमि संयुक्त – समवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं ।31।

अष्ट भूमि आठों गली, पार्श्व वेदिका सार।
हीरों के वे द्वार हैं, शोभा अपरंपार।।

ॐ ह्रीं अष्टभूमिसम्बन्धीनाम् अष्टवीथिकानाम् उभयपार्श्वे अनेकवज्रमय – कपाटयुक्त स्फटिकनिर्मित वेदिकाद्वारसंयुक्त – समवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं ।32।

तिन गलियों की वेदी में, मानुष दर्श करेय।
बैठक में बैठे वहां, भक्ति कर्म हरेय।।

ॐ ह्रीं आभ्यन्तरवीथिकाद्वारसंयुक्त – समवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं ।33।

धूली कंचन मणिमयी, दरवाजे हैं चार।
जगमग – जगमग होत है, झलके ज्ञान का सार।

ॐ ह्रीं स्वर्णमयचतुः द्वारयुक्तधूलिशालदुर्गसंयुक्त – समवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं ।34।

दोय कोट चतु वेदी है, दरवाजे चौबीस।
श्वेत रंग के सब कहे, नित्य झुकाऊँ शीश।।

ॐ ह्रीं रौप्यमयचतुर्विंशतिद्वारयुक्त दुर्गद्वय संयुक्त – समवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं ।35।

फटिक मणि के कोट में, आठ बने हैं द्वार।
हरित रंग के द्वार हैं, दर्शन हैं, सुखकार।।

ॐ ह्रीं स्फटिकमयदुर्गद्वाराभ्यन्तरवेदिकाष्टद्वारहरिद्वर्णकपाट संयुक्त – समवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं ।36।

जिन तनु से बारह गुने, द्वार वहां छत्तीस।
चौड़े जिन वपु चौगुने, तुम्हें झुकाॐ शीश।।

ॐ ह्रीं श्रीजिनदेहतः द्वादशगुणितोच्च – चतुर्गुणायतषट्त्रिंशद् द्वारसंयुक्त – समवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं ।37।

बैठक में सब बैठ के, भक्ति करें जिनदेव।
नहि दूसरा काम है, करें आपकी सेव।।

ॐ ह्रीं द्वाराणाम् उपभयपार्श्वे मुकुटयुक्तविष्ठरसंयुक्त – समवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं ।38।

खम्भा ऊपर गुमठी है, छोटी –छोटी जान।
ऊपर कलशा ध्वज रहे, जपूँ आपका नाम।।

ॐ ह्रीं जिनगुणगायकदेवीविभूषितः क्षुद्रघण्टिकायुक्तानेक विशिष्टद्वार संयुक्त – समवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं ।39।

रत्नमयी तोरण वहां, रतन पुष्प की माल।
घंटी की पंकति बनी, तुम्हें झुकाऊँ भाल।।

ॐ ह्रीं विविधरत्नमाल – पुष्पमाल – क्षुद्रघण्टिका – पंक्तियुक्तद्वार संयुक्त – समवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं ।40।

चित्र बने हैं द्वार पर, जगमग ज्योति जगाय।
सुरनर इनको देख के, मन में अति हर्षाय।।

ॐ ह्रीं विविधरचनायुक्तद्वार संयुक्त – समवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं ।41।

शंभू छंद

नव द्वारों में है द्वार पाल, त्रिद्वार में ज्योतिष हैं ठाड़े।
दो द्वार में व्यंतर वासी हैं, दो में भवनों वाले ठाड़े।।
वे गदा धरे हैं गर्दन पर, कल्पों के वासी द्वार खड़े।
यद्यपि आवश्यक न होते हैं, इनसे वैभव और कांति बढ़े।।

ॐ ह्रीं विविधानेकद्वारपाल संयुक्त – समवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं ।42।

मंगलमय मंगल द्रव्य धरे, मंगल जीवन सबका करते।
है छत्र चमर झारी कलशा, ध्वज पंखा ठोना को धरते।।
दर्पण में अर्पण कर दीना, प्रभु चरणों का ही ध्यान रहे।
ये एक सौ अठ हर जगह रहे, इनकी गिनती मुनिराज कहे।।

ॐ ह्रीं एकलक्षवयुविंशतिसहस्त्रचतुः शतषोडशमंगलद्रव्य विभूषित षट्त्रिंशद्द्वार संयुक्त – समवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं ।43।

दोहा

पांडु काल महाकाल ये, पिंगल पद्म है मान।
रत्न शंख नैसर्प है, बारंबार प्रणाम।।

शेर चाल (दीन बन्धु . . .)

जिनवर चरण में आके निधि सौख्य है देती।
नर देव पशु मानवों की सेवा वो करती।।
वे अन्न वस्त्र आयुध और गहने भी देती।
बर्तन दिये बाजे दिये, गुणगान भी करती।।

वे रत्न दे वें शस्त्र दें, महलों को भी देती।
आकार है गाड़ी, बना वे कुछ नहीं लेती।।
गणधर ऋषि मुनि भी, जाके राजते वहां।
सब जानते हैं किन्तु सौख्य लेते न जरा।।
भक्ति में भक्त आके तुम्हें, शीश झुकाते।
निधियां हैं कितनी गणधर जी, गिनती भी बताते।।

ॐ ह्रीं एकलक्षोनचत्वारिंशित्सहस्त्रनवशताष्टाशीति निधियुक्त – षट् त्रिंशद्द्वार संयुक्त – समवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं ।44।

छत्तीस द्वार सुन्दर हैं एक दिशा में।
चऊ एक सौ चालीस हैं मिल चार दिशा में।।
परदा लगे हैं, स्वर्ण औ कंचन मणिमयी।
घट धूप के ऊपर रखे, सौगंध है भयी।।
मेघो की घटा छाय गई, धूम है इतना।
उठ के चली आकाश में, उसे चन्द्र से मिलना।।
शुभ वास को पा करके वहां, भौरे झूमते।
भक्ति में भक्त डोल के चरणों को चूमते।।
प्रभु वाणी सुनके कर्म धुआं ऐसे ही उड़ता।
जिन चेतना का हो विकास जाती है जड़ता।।

ॐ ह्रीं गगनव्यापकधूम्रघटायुक्तधूपघटयुक्तद्वार संयुक्त – समवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं ।45।

सुन्दर है नृत्यशाला नृत्य ही सदा होते।
कुछ जीव नृत्य देख के सुध बुध सभी खोते।।

ॐ ह्रीं प्रथमतुर्यषष्ठवीथिकानाम् अन्तराले नृत्याले नृत्यशाला युक्तपार्श्व संयुक्त – समवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं ।46।

प्रथम गली चतुर्थ गली छटवीं गली में।
अंतर में नृत्य शाला सुन्दर होती गली में।।
देवांगना हर पल वहां वे नाचती रहती।
गुणगान वे हरपल करें पर वे नहीं थकतीं।।

ॐ ह्रीं षोडशनृत्यशालासहित चतुर्दिशाचतुर्द्वार संयुक्त – समवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं ।47।

अध्यात्म ज्ञान लोक ज्ञान मन वहां रमें।
जिनवास है जहां पे वहां ध्यान में जमें।।
है चार दिशा चार–चार नृत्य शालायें।
भवनों की है ये देवियां पहनी हैं मालायें।।
इक नृत्य शाला में बत्तीस नृत्य करें हैं।
प्रभु ध्यान में हो करके लीन पाप हरे हैं।।
चौथी गली में कल्पवासिनी है नाचती।
है नृत्य शाला पूर्ववत् हो करके जांचती।।
कर – करके नृत्य भक्ति में वे होती लीन हैं।
परिणाम है निर्मल वहां न मन मलीन हैं।।

ॐ ह्रीं कल्पवासिनी नृत्ययुक्त चतुर्थान्तरवीथिकायाम् पूर्ववत् नृत्यशाला संयुक्त – समवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं ।48।

दोहा

देव पशु नर मिल सभी, प्रभु की भक्ति गायें।
हो कल्याण मेरा प्रभु, शत –शत शीश झुकायें।।

परिपुष्पांजलिं क्षिपेत

पूर्व दिशा मानस्तम्भ संबंधी पूजन

स्थापना

शंभू छंद

जिन वीतराग सर्वज्ञ प्रभु, यह अन्तर आतम ज्ञानी हैं।
हैं दोष अठारह रहित प्रभु, निज में निज के ही ध्यानी हैं।।
जग छोड़ा है सुख पाया है, संसार तुम्हें जिनवर कहता।
अन्तर में आओ हे जिनवर, तुम सम बनने पूजा करता।।

ॐ ह्रीं पूर्वदिशामानस्तम्भस्थित जिनेन्द्र अत्र अवतर –अवतर संवौषट आह्वाननं, अत्र तिष्ठ –तिष्ठ ठः ठः स्थापनं, अत्र मम सन्निहितौ भव – भव वषट् सन्निधिकरणं।

तर्ज – चौबीसी पूजन

धोया तन जल से खूब, तन न स्वच्छ हुआ।
हो जन्म जरा मृत्यु नाश, जल का कलश लिया।।
पूरब दिश मानस्तम्भ, भक्ति नित्य करें।
हो मान रहित मम ज्ञान, ऐसे भाव धरें।।

ॐ ह्रीं पूर्व दिशा मानस्तम्भ स्थित जिनेन्द्रेभ्यो जलं निर्व, स्वाहा।

बांधू चिन्ता में कर्म, अगनी सम जलता।
चन्दन से पूजूँ नाथ, पाऊँ शीतलता।।
पूरब दिशा मान स्तम्भ, भक्ति नित्य करें।
हो मान रहित मम ज्ञान, ऐसे भाव धरें।।

ॐ ह्रीं पूर्व दिशा मानस्तम्भ स्थित जिनेन्द्रेभ्यश्चन्दनं निर्व, स्वाहा।

दुखड़े पाये गति चार, सुख पद ना पाया।
अक्षत लेकर के नाथ, चरणों में आया।।
पूरब. . .

ॐ ह्रीं पूर्व दिशा मानस्तम्भ स्थित जिनेन्द्रेभ्यो अक्षतं निर्व, स्वाहा।

ये राग भाव भगवान, कर्म कराते हैं।
छूटूँ इनसे हे नाथ, पुष्प चढ़ाते हैं।।
पूरब. . .

ॐ ह्रीं पूर्व दिशा मानस्तम्भ स्थित जिनेन्द्रेभ्यः पुष्पं निर्व, स्वाहा।

चारों गति खाया खूब, पर न पेट भरा।
नैवेद्य समर्पित आज, काटो कर्म जरा।।
पूरब. . .

ॐ ह्रीं पूर्व दिशा मानस्तम्भ स्थित जिनेन्द्रेभ्यः नैवेद्यं निर्व, स्वाहा।

केवलज्ञानी हो नाथ, ज्ञान ही उजियारा।
हाथों में लाया दीप, कर्मों का हारा।।
पूरब. . .

ॐ ह्रीं पूर्व दिशा मानस्तम्भ स्थित जिनेन्द्रेभ्यः दीपं निर्व, स्वाहा।

काया को रहा संवार, आतम भूल गया।
अग्नि में खेऊँ धूप, दर्शन आज हुआ।।
पूरब. . .

ॐ ह्रीं पूर्व दिशा मानस्तम्भ स्थित जिनेन्द्रेभ्यः फलं निर्व, स्वाहा।

तेरी छाया में बैठ, भक्ति हम करते।
ले अष्ट द्रव्य का थाल, पूजा नित करते।।
पूरब. . .

ॐ ह्रीं पूर्व दिशा मानस्तम्भ स्थित जिनेन्द्रेभ्यो अर्घ्यं निर्व, स्वाहा।

दक्षिण दिशा मानस्तम्भ संबंधी पूजन

स्थापना
त्रिभंगी छंद

अरिहन्त नमन कर, आत्म चमन कर, समवशरण पूजा करते।
मुक्ति की राहें, धर्म की चाहें कर्मगिरि को सब हरते।।
प्रभु न लौटेंगे, मुक्त रहेंगे, ध्या भावों को शुद्ध करें।
हिरदय कमलासन, प्रभु का शासन, बारम्बर प्रणाम करें।।

ॐ ह्रीं दक्षिण दिक् मानस्तम्भस्थित जिनेन्द्र अत्र अवतर अवतर संवौषट आह्वाननं, अत्र तिष्ठ – तिष्ठ ठः ठः स्थापनं, अत्र मन सन्निहितौ भव – भव वषद् सन्निधिकरणं।

चाल : सोलहकारण पूजा

जल का कलशा लेकर आए, भावों से हम पूज रचाएं।
श्री जिनराज, पूरण होते सारे काज।।
दक्षिण दिश के मानस्तम्भ, बारम्बार मैं करूँ नमन।
श्री जिनराज, पूरण होवें सारे काज।।

ॐ ह्रीं दक्षिण दिक् मानस्तम्भस्थित जिनेन्द्रेभ्यो जलं निर्व. स्वाहा।

चंदन है शीतलता दाय, मन मेरा शीतल हो जाए।
श्री जिनराज, पूरण होते सारे काज।। दक्षिण...

ॐ ह्रीं दक्षिण दिक् मानस्तम्भस्थित जिनेन्द्रेभ्यश्चन्दनं जलं निर्व. स्वाहा।

अक्षय पद को अक्षत लाए, स्थिर मन मेरा हो जाए।
श्री जिनराज, पूरण होते सारे काज।। दक्षिण......

ॐ ह्रीं दक्षिण दिक् मानस्तम्भस्थित जिनेन्द्रेभ्यो अक्षतं निर्व. स्वाहा।

पुष्पों की थाली भर लाए, राग भाव से मन हट जाए।
श्री जिनराज, पूरण होते सारे काज।।
दक्षिण दिश के मानस्तम्भ, बारम्बार मैं करूँ नमन।
श्री जिनराज, पूरण होते सारे काज।।

ॐ ह्रीं दक्षिण दिक् मानस्तम्भस्थित जिनेन्द्रेभ्यः पुष्पं निर्व. स्वाहा।

चरू पूजन के कारण लाए, भोजन नहीं भूख मिट जाए।
श्री जिनराज, पूरण होते सारे काज।। दक्षिण......

ॐ ह्रीं दक्षिण दिक् मानस्तम्भस्थित जिनेन्द्रेभ्यो नैवद्यं निर्व. स्वाहा।

जगमग अन्तर दीप जगायें, पूजन को दीपक ले आए।
श्री जिनराज, पूरण होते सारे काज।। दक्षिण......

ॐ ह्रीं दक्षिण दिक् मानस्तम्भस्थित जिनेन्द्रेभ्यो दीपं निर्व. स्वाहा।

अग्नि मांही धूप चढ़ाए, अष्टकर्म का धुआं उड़ाए।
श्री जिनराज, पूरण होते सारे काज।। दक्षिण......

ॐ ह्रीं दक्षिण दिक् मानस्तम्भस्थित जिनेन्द्रेभ्यो धूपं निर्व. स्वाहा।

फल लेकर हम चरण में आये, मृत्यु नहीं मोक्ष को पाये।
श्री जिनराज, पूरण होते सारे काज।। दक्षिण......

ॐ ह्रीं दक्षिण दिक् मानस्तम्भस्थित जिनेन्द्रेभ्यः फलं निर्व. स्वाहा।

अर्घ्यों का हम थाल सजाए, मुक्ति महल की सेज दिलाय।
श्री जिनराज, पूरण होते सारे काज।। दक्षिण......

ॐ ह्रीं दक्षिण दिक् मानस्तम्भस्थित जिनेन्द्रेभ्यो अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

पश्चिम दिशा मानस्तम्भ संबंधी पूजन

स्थापना

त्रिभंगी छंद

गति चार घुमाया, कष्ट दिलाया, कर्म दुष्ट पीड़ा देते।
करूणा को तरसा, धर्म न बरसा, ज्ञान मेरा सब हर लेते।।
प्रभु ख्याति सुनकर, नाम को जपकर, पूजा को हम आए हैं।
भटकूं न वन–वन पाऊं उपवन, चरण में शीश झुकाए हैं।।

ॐ ह्रीं पश्चिम दिक् मानस्तम्भस्थित जिनेन्द्र अत्र अवतर अवतर संवौषट आह्वाननं, अत्र तिष्ठ–तिष्ठ ठः ठः स्थापनं, अत्र मम सन्निहितो भव–भव वषट् सन्निधिकरणं।

चौपाई

जलता –जलता मैं आया हूँ, जल झारी में भर लाया हूँ।
तन मन मेरा शुद्ध कर देना, पीड़ा मेरी सब हर लेना।।
पश्चिम दिश में मानस्तम्भ है, समवशरण में चमन – चमन है।
भावों से हम पूज रचायें, पूजन समवशरण कर आयें।।

ॐ ह्रीं पश्चिम दिक् मानस्तम्भस्थित जिनेन्द्रभ्यो जलं निर्व. स्वाहा।

नन्दन को चन्दन अर्पण है, वीतरागता जिन दर्पण है।
चन्दन तन की दाह मिटाये, पूजा कर शीतल हो जाये।।
पश्चिम दिश में मानस्तम्भ है, समवशरण में चमन – चमन है।
भावो से हम पूज रचाये, पूजन समवशरण कर आयें।।

ॐ ह्रीं पश्चिम दिक् मानस्तम्भस्थित जिनेन्द्रभ्यश्चन्दनं निर्व. स्वाहा।

रहती मुझको पद अभिलाषा, समझी न अक्षत की भाषा।
पूजा को अक्षत ले जायें, अक्षय पद जो शीघ्र दिलाये।। पश्चिम...

ॐ ह्रीं पश्चिम दिक् मानस्तम्भस्थित जिनेन्द्रभ्यो अक्षतं निर्व. स्वाहा।

पुष्पों ने जीवन उलझाया, इसमें सार कहीं न पाया।
पुष्पों से पूजा हम करते, काम वासना को जो हरते।। पश्चिम...

ॐ ह्रीं पश्चिम दिक् मानस्तम्भस्थित जिनेन्द्रभ्यः पुष्पं निर्व. स्वाहा।

भूखा उदर है दीन बनाता, चारों गति में हर पल खाता।
मैं नैवद्य की थाली लाया, तुमसा कोई और न पाया।। पश्चिम...

ॐ ह्रीं पश्चिम दिक् मानस्तम्भस्थित जिनेन्द्रभ्यो नैवेद्यं निर्व. स्वाहा।

अंधियारा बाहर जब होवे, दीप जला हम तम को खोवें।
अन्दर में उजियारा कर दो, दीप चढ़ाये ज्योति भर दो।। पश्चिम...

ॐ ह्रीं पश्चिम दिक् मानस्तम्भस्थित जिनेन्द्रभ्यो दीपं निर्व. स्वाहा।

काटा प्रभु कर्मों को तुमने, छांटा प्रभु कर्मों को तुमने।
कर्म बंध हम खूब कराये, अब चरणों में धूप चढ़ायें।। पश्चिम...

ॐ ह्रीं पश्चिम दिक् मानस्तम्भस्थित जिनेन्द्रभ्यो धूपं निर्व. स्वाहा।

जग के जंजालों में फंसते, पाप कर्म को करके हंसते।
पर न फल को हमने जाना, फल अर्पित है तुमको माना।। पश्चिम...

ॐ ह्रीं पश्चिम दिक् मानस्तम्भस्थित जिनेन्द्रभ्यः फलं निर्व. स्वाहा।

जैसे सूरज ढल जाता है, जैसे हिम भी गल जाता है।
वैसा जीवन है प्रभु मेरा, अर्घ्य समर्पित करो सवेरा।।
पश्चिम दिश में मानस्तम्भ है, समवशरण में चमन – चमन है
भावों से हम पूज रचाये, पूजन समवशरण कर आये।।

ॐ ह्रीं पश्चिम दिक् मानस्तम्भस्थित जिनेन्द्रभ्यो अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

उत्तर दिशा मानस्तम्भ संबंधी पूजन

स्थापना शंभू छंद

अध्यातम अनुभव मानव को, प्रभु का दर्शन ही देता है।
अध्यातम शांति जब आये, मानव चिन्ता को खोता है।।
मानस्तम्भों के दर्शन से ही, अभिमान मान खण्डित होता।
अतिशय कारी प्रभु का दर्शन, भक्तों की झोली भर देता।।

ॐ ह्रीं उत्तर दिशा मानस्तम्भ स्थित जिनेन्द्र अत्र अवतर अवतर संवौषट आह्वाननं, अत्र तिष्ठ – तिष्ठ ठः ठः स्थापनं अत्र मम सन्निहितों भव – भव वषट् सन्निधिकरणं।

(तर्ज : नीर गंध अक्षतान्...)

विश्व शान्ति आत्म शान्ति, हो त्रिलोक में सदा।
कर्म मैल भी धुले, जीव पायेंगे मुद्रा।।
जिन महल में मानथंभ, मान को गलायेगा।
भव्य दर्श लेय कर, मोक्ष पथ को पाएगा।।

ॐ ह्रीं पश्चिम दिक् मानस्तम्भस्थित जिनेन्द्रभ्यो जल निर्व. स्वाहा।

ईर्ष्या से आत्मदाह, क्रोध भी जलावता।
चंदनादि लेयकर, चर्ण में चढ़ावता।। जिन...

ॐ ह्रीं पश्चिम दिक् मानस्तम्भस्थित जिनेन्द्रभ्य चन्दनं निर्व. स्वाहा।

अक्षतों से पूजता मैं, जन्म न हो फिर मेरा।
अक्षतों की सम्पत्ति पे, वास प्रभु है तेरा।। जिन...

ॐ ह्रीं पश्चिम दिक् मानस्तम्भस्थित जिनेन्द्रभ्यो अक्षतं निर्व. स्वाहा।

रूप रंग पुष्प का, जीव को लुभावता।
छूटने को काम से, पुष्प मैं चढ़ावता।। जिन...

ॐ ह्रीं पश्चिम दिक् मानस्तम्भस्थित जिनेन्द्रभ्यः पुष्पं निर्व. स्वाहा।

भूख की जो औषधि, आप ने वो खायी है।
मेरी क्षुधा भी नशे, भावना ये भायी है।। जिन...

ॐ ह्रीं पश्चिम दिक् मानस्तम्भस्थित जिनेन्द्रभ्यो नैवेद्यं निर्व. स्वाहा।

भ्रमण भ्रमित होके करें, नाहि पाथ सूझते।
दीप चर्ण में धरूँ, प्रभु चरण को पूजते।। जिन...

ॐ ह्रीं पश्चिम दिक् मानस्तम्भस्थित जिनेन्द्रभ्यो दीपं निर्व. स्वाहा।

विकृति ने प्रकृति को, फल से दूर है रखा।
मुक्ति फल मुझे मिले, हो ध्यान में मेरा सखा।। जिन.

ॐ ह्रीं पश्चिम दिक् मानस्तम्भस्थित जिनेन्द्रभ्यो धूपं निर्व. स्वाहा।

कल्पवृक्ष आप हो, आप ही चिन्तामणि।
कर्म मेघ छाये रहे, आप हो आतम धनी।। जिन...

ॐ ह्रीं पश्चिम दिक् मानस्तम्भस्थित जिनेन्द्रभ्यः फलं निर्व. स्वाहा।

प्रेम की वेदी बना, आत्मा बिठा दिया।
अर्घ्य से मैं पूजता, हर्ष मय मेरा जिया।। जिन...

ॐ ह्रीं पश्चिम दिक् मानस्तम्भस्थित जिनेन्द्रभ्यो अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

जलमाला

सुंदर हैं, चारों दिशा, मानस्तम्भ हैं चार।
जिन प्रतिमाएं राजती, दर्शन है सुखकार।।

पद्धरि छंद

जय समवशरण महिमा अपार, भव्यों को करता है ये पार।
नाना प्राणी जन दर्श लेय, मानी का मान ही तुम हरेय।।
जग कर्मों का बन्धन रहता, कर्मों के दुख को वह सहता।

चारों गतियों में घूम रहे, गतियों में जाकर कष्ट सहे।।
बन्धन बांधा तन को काटा, क्षण को न मिली मुझको साता।
अब शरणा तेरे आये हैं, अब चरणा तेरे पाये हैं।।
इन हाथों से पूजा करते, इन आंखों से दर्शन करते।
अब पुण्य प्रबल मेरा जागा, मन तेरे चरणों में लागा।।
शुभ समवशरण पूजा करता, पुण्यों से झोली मैं भरता।
प्रभु ने आतम को पाया है, आतम में ध्यान लगाया है।।
तव दर्श से आतम मैं पाऊँ, आतम को पा मुक्ति जाऊँ।
जिनवर का महल तो सुन्दर है, जिसमें बैठे प्रभु अन्दर हैं।।
चारों दिश में चतु मानस्तम्भ, दर्शन कर हो जाते हैं नम्र।
नीचे से है चौकोर धार, हम करते इनको नमस्कार।।
ऊपर हो जाए गोलाकार, दैदीप्यमान प्रतिमा निहार।
है व्रजमयी, है फटिकमणी, दिपती सुंदर वैडूर्यमणी।।
नन्दोत्तर आदि कही जान, सुंदर – सुंदर हैं इनके नाम।
चहूं ओर वापिका चार जान, राजीव खिले मनहर महान।।
उन पर भौंरे झूमे ऐसे, पृथ्वी में लगा अंजन जैसे।
जय ध्वजा चमर है शोभ पाए, चारों दिश में वह लहलहाऐ।।
मानी जन आके मान जाए, मन की आकर शुद्धि करायें।।
चारों दिश में सोलह वापी, तिर जावे जो होवे पापी।
चारों दिश में चतु प्रतिमा हैं, लखते जगती मन प्रतिभा हैं।।
सुर–नर वंदन को आते हैं, नाचें गाते हर्षाते हैं।
वसु–प्रातिहार्य शोभा बढ़ाये, प्राणीजन तुमको सिर नवाएं।।
इससे ही मानस्तम्भ नाम, सुर–नर करते तुमको प्रणाम।
वापी समीप हैं कुण्ड दोए, हैं स्वर्णमयी तव दर्श होए।
जिन पूजा को जो भी आवे, पग धोकर के आनंद पावे।
वापी जल से पूजा करेय, यह जन्म जरा मृत्यु हरेय।
लटकी है रत्नों की माला, यह तोड़े कर्मों का जाला।।
पूरब दिश का वर्णन कीना, दक्षिण दिश में ऐसे लीना।
पश्चिम उत्तर सब एक जान, चहुं दिश में मानस्तम्भ मान।।

जिनराज बहुत वैभवशाली, जिन महल के जिनवर हैं माली।
'स्वस्ति' करती जिन नमस्कार, इस कर्म मान पर कर प्रहार।।
ॐ ह्रीं चतुर्दिक्षुसम्बन्धि मानस्तम्भस्थित जिन प्रतिमाभ्यः पूर्णार्घं निर्वपामीति स्वाहा।

दोहा

मानस्तम्भ के दर्श से, मान गलित हो जाये।
विनय भाव आवे महा, मुक्ति से मिलवाये।।
।।इत्याशीर्वाद : पुष्पांजलिं क्षिपेत।।

समवशरण स्थित सप्त भूमि पूजन

त्रिभंगी छंद

आग्नेय दिशा में, कर्म नशाने, बिम्ब जिनालय राज रहे।
पूजा करना है, दुख हरना है, आव्हानन का ताज रहे।।
अथ आग्नेय दिशासप्त भूमिमन्दिर जिनस्थापना
नैऋत्य दिशा में, कर्म नशाने, बिम्ब जिनालय राज रहे।
पूजा करना है, दुख हरना है, आव्हानन का ताज रहे।।
अथ नैऋत्यदिश सप्तभूमिमन्दिर जिनस्थापना
वायव्य दिशा में कर्म नशाने, बिम्ब जिनालय राज रहे।
पूजा करना है, दुख हरना है, आव्हानन का ताज रहे।।
अथ वायव्य दिशासप्तभूमिमन्दिर जिनस्थापना
ईशान दिशा में, कर्म नशाने, बिम्ब जिनालय राज रहे।
पूजा करना है, दुख हरना है, आव्हानन का ताज रहे।।
अथ ईशान दिशाचैत्यभूमिमन्दिर जिनस्थापना

स्थापना (गीता छंद)

त्रैलोक्य में जिनराज सेवा, भाग्य से सबको मिले।
संसार सागर पार होने, धर्म का अमृत मिले।।
भगवान तेरा गुण गान सुनकर, दर्श को हम आये हैं।
मनहर तुम्हारा रूप लखकर, हर्ष मन में पाये है।।

ॐ ह्रीं सप्तम भूमि जिन प्रतिमाः अत्र अवतर अवतर संवौषद् आह्वाननं, अत्र तिष्ठ–तिष्ठ ठः ठः स्थापनं, अत्र मम सन्निहितों भव – भव वषट् सन्निधिकरणं।

शंभू छंद

तन को निर्मल करने प्रभुवर, जल से स्नान किया करता।
मन निर्मल मेरा हो जावे, इसलिये मैं जल अर्पण करता।।
चहुं दिश में चतु मन्दिर राजे, जिस पर कलशा शोभा पाते।
जिन समवशरण की पूजा को, शुभ भाव बनाकर हम आते।।

ॐ ह्रीं चतुदिक्सम्बन्धी सप्तभूमिमन्दिरस्थ जिनप्रतिमाभ्यो जलम् निर्व. स्वाहा

क्रोधी मन चैन न पाता है, यह द्वेष भाव बढ़वाता है।
चरणों में चंदन अर्पित है, शांति की आस लगाता है।।
चहुं दिश में चतु मन्दिर राजे...

ॐ ह्रीं चतुदिक्सम्बन्धी सप्तभूमिमन्दिरस्थ जिनप्रतिमाभ्यश्चन्दनं निर्व. स्वाहा

उज्जवल अक्षत शुभ भाव करे, अक्षय पद पाने आया हूँ।
अक्षत से पूजा करके मैं, अक्षय भावों को पाया हूँ।।
चहुं दिश में चतु मन्दिर राजे...

ॐ ह्रीं चतुदिक्सम्बन्धी सप्तभूमिमन्दिरस्थ जिनप्रतिमाभ्यो अक्षतं निर्व. स्वाहा

कोमल पुष्पों की कलिकाएं, जीवों का चित्त लुभाती हैं।
विषयों के भौंरे दुखी रहें, पुष्पों से पूजा भाती है।।
चहुं दिश में चतु मन्दिर राजे...

ॐ ह्रीं चतुदिक्सम्बन्धी सप्तभूमिमन्दिरस्थ जिनप्रतिमाभ्यः पुष्पं निर्व. स्वाहा

रसयुक्त सरस भोजन खाकर, यह तन भी रोगी होता है।
नैवेद्य से पूजा करते हैं, यह तन रोगों को खोता है।।
चहुं दिश में चतु मन्दिर राजे...

ॐ ह्रीं चतुदिक्सम्बन्धी सप्तभूमिमन्दिरस्थ जिनप्रतिमाभ्यो नैवेद्यं निर्व. स्वाहा

दीपक उजियाला करता है, अंतः में छाया अंधकार।
दीपक ले पूजन को आये, चरणों में शत–शत नमस्कार।।
चहुं दिश में चतु मन्दिर राजे...

ॐ ह्रीं चतुदिक्सम्बन्धी सप्तभूमिमन्दिरस्थ जिनप्रतिमाभ्यो दीपं निर्व. स्वाहा

कर्मों ने जग भरमाया है, कर्मों ने नाच नचाया है।
कर्मों का धुआं उड़े प्रभुवर, तव पूजा कर हर्षाया है।।
चहुं दिश में चतु मन्दिर राजे, जिस पर कलशा शोभा पाते।
जिन समवशरण की पूजा को, शुभ भाव बनाकर हम आते।।

ॐ ह्रीं चतुदिक्सम्बन्धी सप्तभूमिमन्दिरस्थ जिनप्रतिमाभ्यो धूपं निर्व. स्वाहा

ज्ञानामृत सम फल कोई नहीं, ज्ञानामृत रस कभी पिया नहीं।
चरणों में फल अर्पित करते, मुक्ति का फल मिल जाए सही।।
चहुं दिश में चतु मन्दिर राजे...

ॐ ह्रीं चतुदिक्सम्बन्धी सप्तभूमिमन्दिरस्थ जिनप्रतिमाभ्यः फलं निर्व. स्वाहा

जल फल वसु द्रव्य मिलाकर के, यह अर्घ्य समर्पित करते हैं।
पाऊँ अनर्घ्य पद हे प्रभुवर, आनन्द के झरने झरते हैं।।
चहुं दिश में चतु मन्दिर राजे...

ॐ ह्रीं चतुदिक्सम्बन्धी सप्तभूमिमन्दिरस्थ जिनप्रतिमाभ्यो अर्घ्यं निर्व. स्वाहा

जयमाला

चैत्य भूमि पूजन करी, उत्तम भाव बनाए।
सुर गण नरपति आए के, शत–शत शीश नवाए।।

शेर चाल (हे दीन बंधु...)

जयकार करें हम प्रथम, भगवान तुम्हारा।
चरणों में शीश झुकाता है भक्त तुम्हारा।।
जाके समवशरण की, प्रभु वन्दना करें।
है चैत्यधरा के प्रभो की अर्चना करें।।1।।
है पृथ्वी वहां नीलमणि, रत्न की बनी।
श्रेणी में पंच मन्दिरों से, शोभा भी बढ़ी।।
जिनदेव बसे मध्य में शोभा को बढ़ायें।
हम भाव सहित जाके वहां अर्घ्य चढ़ायें।।2।।

ऊंची है भूमि जिस पे जिनालय बहुत बने।
जिनद्वार की शोभा बढ़ाने रत्न भी जड़े।।
औ चौक बने कोठा बने द्वार भी बने।
तिन पर सजी है गुमठी कलशा वहां घने।।3।।
आकाश में ध्वजा अनूप शोभा बढ़ाये।
मानो हो नृत्यकार जैसे नृत्य कराये।।
अंदर बनी है रचना और बाहर भी बनी।
शुभ पीठ बने शिखर पे, मंडप भी है तनी।।4।।
इक सहस पत्र के कमल वहां पे हैं साजते।
उस गंधकुटी में प्रभु जी आके राजते।।
मणियों से देव–देवियाँ मिल आरती करें।
भावों से करें भक्ति को वे नृत्य भी करें।।5।।
शुभ पुण्य का उदय हुआ, जिन दर्श को पाया।
ले अष्ट द्रव्य थाल सजा चरणों में आया।।
घर जाके प्राणी पाप में ही डुबकी लगाये।।6।।
है आपका ये द्वार जहां पुण्य कमाये।
है आपका ये द्वार सत्य ज्ञान सिखाता।
भटके हुए राही को भी ये राह दिखाता।।
है आपका ये द्वार त्याग धर्म बताता।
ये भक्त द्वार आके तुम्हें शीश झुकाता।।7।।

दोहा

तुच्छ बुद्धि से है किया, हमने प्रभु गुणगान।
यदि गलती हो गई कहीं, क्षमा करो भगवान।।
ॐ ह्रीं चतुदिक्सम्बन्धी सप्तभूमिमन्दिरस्थ जिनप्रतिमाभ्यः पूर्णार्घ्यं।
'स्वस्ति' जिन भगवान की, पूजा करे अपार।
भवसागर से होयेगी, नाव हमारी पार।।
परिपुष्पांजलिं क्षिपेत्

प्रथम चैत्य प्रासाद भूमि अर्घ्यावली

चौपाई

प्रथम भूमि प्रासाद को जानो, गणधर कहे सहस्त्र प्रमानो।।
भक्ति में हम पाठ रचायें, प्रभुवर के गुणगान को गायें।
प्रथम कोट है वेदी प्रथम, दर्शन कर मन होता है नम।
चैत्य भूमि भी बीच में होती, कर्मों के वह गिरि को खोती।।
ॐ ह्रीं प्रथम गली द्वारोंभयपार्श्वभागे अन्तर्गलीमध्ये चैत्यमन्दिरस्थ जिनेन्द्राय अर्घ्यं।1।

जिन मंदिर के आजू–बाजू, पांच–पांच मंदिर को साजू।
वायव अरू ईशान बताया, जिन भवनों में प्रभु को पाया।।
ॐ ह्रीं चतुर्विदिशसु पंचपंचमन्दिरमध्य जिनमन्दिर संयुक्त समवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।2।

वलय व्यास को आप विचारो, वायव दिश में प्रभु निहारो।
भक्ति का सुख ज्ञान में पाये, ज्ञानी आतम ध्यान लगायें।
ॐ ह्रीं वायव्यदिशायां वलयव्यासयुक्तचैत्यभूमि संयुक्त समवशरण स्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।3।

चैत्य भूमि में सुंदर मंदिर, तालवृक्ष बावड़ी है अंदर।
रचना देखत ही सुख पाये, देव–देवी विद्याधर आये।।
ॐ ह्रीं चैत्यभूमिसरोवरवापिकासोपानविष्ठर संयुक्त चैत्समंदिर स्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।4।

सरस सरोवर सार वापिका, बनी बैठ के सुन्दर लतिका।
सुंदर सीढ़ी चढ़कर जाये, फिर जिनदेव के दर्शन पाये।।
ॐ ह्रीं सरोवरवापिकातालवृक्षयुक्तचैत्यभूमिमंदिरसंयुक्त समवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।5।

वापी ऊपर छतरी छत है, चार खंभ होते अक्षत हैं।
शिखर पे कलशा ध्वजा चढ़ाये, सुन्दर मन्दिर शोभा पाये।।
ॐ ह्रीं वापिकायाः कोणस्थस्तम्भेषु शिखरध्वजाकलशयुक्तचैत्य मंदिर स्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।6।

सुन्दर घने वृक्ष लहराए, षट् ऋतु के फल फूल भी आये।
जहां जिनेश्वर स्वयं विराजें, सरस ध्यान शोभा में राजे।।

ॐ ह्रीं षड्ऋतु फलफूलयुक्त श्रेणीबद्धवृक्ष चैत्यमंदिरस्थ जिनेन्द्राय अर्घ्यं।7।

उन वृक्षन की शाखा सुन्दर, मन्द पवन जिनवास है अन्दर।
जहां प्रभु जी ध्यान लगायें, प्रकृति शोभा वहीं बढ़ाये।।

ॐ ह्रीं अनेकशाखासहित वृक्षशोभितभूमि चैत्यमन्दिरस्थ जिनेन्द्राय अर्घ्यं।8।

वृक्षों नीचे शिला रखी है, चन्द्र कांतिसम वहीं दिखी है।
संघ सहित मुनिवर हैं आवें, लख शोभा मस्तक झुक जावें।।

ॐ ह्रीं चैत्यभूमि वृक्षतलेष, अनेक शिलासु दिगम्बर मुनिसमूह सहित चैत्यमन्दिरस्थजिनेन्द्राय अर्घ्यं।9।

दया के सागर गुण मणि आगर, ज्ञान ध्यान को करें उजागर।
चैत्य भूमि में ध्यान लगायें, दर्शन कर हम सुख को पाएं।।

ॐ ह्रीं चैत्यभूमि दिगम्बर मुनिसंयुक्त चैत्यमन्दिरस्थजिनेन्द्राय अर्घ्यं।10।

ध्यान किया निज ज्ञान को पाया, जीवों को उपदेश सुनाया।
ऐसे मुनिवर दर्शन देवें, भव सिन्धु से नाव को खेवें।।

ॐ ह्रीं चैत्यभूमि शिलासु द्विविध धर्मोपदेशक दिगम्बरयति संयुक्त चैत्यमन्दिरस्थ जिनेन्द्राय अर्घ्यं।11।

कर्म गिरि को नित्य गिरायें, तप तपते वो ध्यान लगायें।
प्रशम मूर्ति वैराग्य जगायें, वैरागी का ध्यान बढ़ायें।।

ॐ ह्रीं चैत्य भूमि कर्मध्वंसक दिगम्बर यति संयुक्त चैत्य मंदिरस्थ जिनेन्द्राय अर्घ्यं।12।

स्वर्ण मयी रत्नों के द्वारा, द्वार पे सुन्दर बंदन वारा।
महल गोख छज्जा है सुन्दर, वहां बने हैं मन्दिर सुन्दर।।
शोभा इसकी हमें लुभाये, जिनवर दर्शन हम भी पायें।
सुर–नर विद्याधर भी आते, लख शोभा सबही हर्षाते।।

ॐ ह्रीं अनेक रचनासंयुक्त चैत्य भूमि मन्दिरस्थ जिनेन्द्राय अर्घ्यं।13।

समवशरण में चित्र बने हैं, कर्म घातियां आप हने हैं।
चित्रों से भी शिक्षा पाते, अपना–अपना ज्ञान बढ़ाते।।

ॐ ह्रीं अनेक रचनासंयुक्त चैत्य भूमि मन्दिरस्थ जिनेन्द्राय अर्घ्यं।14।

दोहा

भूमि प्रथम प्रासाद में, जिन मंदिर जिन धाम।
उन सबकी पूजा करें, बारंबार प्रणाम।।

ॐ ह्रीं प्रथम प्रासाद भूमि स्थित जिनेन्द्राय पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा

द्वितीय खातिका भूमि सम्बन्धी अर्घ्यावली

दोहा

दूजी गली विशाल है, भूमि दूजी जान।
स्वच्छ नीर से है भरी, नाम खातिका मान।।

ॐ ह्रीं मार्गे वामदक्षिणपार्श्वे अन्तर्गलिमध्ये द्वितीयखातिका भूमि संयुक्तसमवशरणस्थ जिनेन्द्राय अर्घ्यं।4।

खाई रतनन है जड़ी, वलय व्यास में मान।
शोभा अपरम्पार है, श्री सर्वज्ञ बखान।।

ॐ ह्रीं द्वाविंशतिभागवलय व्यासयुक्त द्वितीयखातिका भूमि रत्नसोपान संयुक्तसमवशरणस्थ जिनेन्द्राय अर्घ्यं।2।

प्रथम दूजी के मध्य में, भरी खातिका जान।
वेदी सुन्दर द्वार है, शोभा परम प्रमान।।

ॐ ह्रीं प्रथम द्वितीय परिधौ अनेकलघुद्वारसंयुक्तसमवशरणस्थ जिनेन्द्राय अर्घ्यं।3।

लघु द्वारे बहु शोभते, गुमठी बनी प्रमान।
सुन्दर कलशा भी धरे, बारम्बार प्रणाम।।

ॐ ह्रीं लघुद्वारे कलशक्षुद्रगुमठी संयुक्तसमवशरण स्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।4।

लघु द्वार के आगे में, खाई पे पुल जान।
पुल की शोभा है अधिक, देव करे सम्मान।।

ॐ ह्रीं लघुद्वाराग्रे रत्नखचितसेतुयुक्तखातिकासंयुक्तसमवशरण स्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।5।

लघु द्वार पुल से चले, गंध कुटी की ओर।
सुगम मार्ग लगता कहें, रत्नों की है भोर।।

ॐ ह्रीं चैत्यभूमेः अग्रे वेदिकालघुद्वारानेकलघुद्वारसेतुमार्गेभ्यः गन्धकुट्याः भूमिपर्यन्तयुगममार्गसुयंक्तसमवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।6।

दूजी वेदी द्वार पर, निकलें नर पशु देव।
अंतर गलियन जाय के, दर्श करे जिनदेव।।

ॐ ह्रीं द्वितीयवेदिकाद्वारमध्यतः गन्धकुटीपर्यन्तसुगममार्गसंयुक्त समवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं ।7।

पुल के ऊपर बैठ के, करते हैं आराम।
ध्वजा कलश मणिका बनी, आतम में विश्राम।।

ॐ ह्रीं सेतोः उपरि उभयपार्श्वे कलशाध्वजाबहुशिखरयुक्तबहु – विष्ठर संयुक्तसमवशरण स्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं ।8।

दर परदा बैठक लगे, चित्र बने अभिराम।
झलके खाई में सभी, सुन्दर जिन भगवान।।

ॐ ह्रीं सेतोः उपरि अनेक विष्ठर संयुक्त समवशरण स्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।9।

चौपाई

खाई खातिका नीर जु प्यारा, जल है क्षीर सिन्धु सम न्यारा।
छोटी बड़ी नाव भी चलती, तेज धार में नावें हिलतीं।।

ॐ ह्रीं अनेकलघुविशालनौका संयुक्त समवशरण स्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं ।10।

सुन्दर बंगला बने है ऊपर, शोभा पावे छतरी ता पर।
सिंह, गजादिक मुंह को बाये, ऐसे उसमें चित्र बनाये।।

ॐ ह्रीं जबनिकाशोभाशोभितानेकनौका संयुक्त समवशरण स्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं ।11।

नौकाओं में सुर–नर नाचे, जिन भगवान के गुण को वांचे।
बाजे बजते बजे बधाई, प्रभु दर्शन की महिमा गाई।।

ॐ ह्रीं जिनगुणगायकदेव विद्याधरयुक्तनौका संयुक्त समवशरण स्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं ।12।

अति शीघ्र नौका भी हिलती, दौड़–दौड़ करके वह चलती।
जाकर उसमें आनंद लेते, भवसागर से नाव को खेते।।

ॐ ह्रीं खातिकासु अतिशीघ्रगामीनौका संयुक्त समवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं ।13।

श्री प्रभुवर के दर्शन पावे, समवशरण में पुण्य कमावे।
भक्ति रंग में सब रंग जावें, पूजा करके हम हर्षावें।।

ॐ ह्रीं अनेकातिशययुक्त पुण्यसंयुक्त समवशरण स्थित जिनेन्द्राय पूर्णार्घ्यं ।14।

तृतीय पुष्प वाटिका (लता) भूमि अर्घ्यावली

(शेर चाल...हे दीन बन्धु...)

तीसरी है भूमि, पुष्प वाटिका कही।
पुष्पों की गंध, चारों ओर आती है सही।।
अंतर गली में दूसरी वेदी वहां बनी।
सुंदर बने हैं द्वार वो मणियों से है सजी।।

ॐ ह्रीं अनेकातिशययुक्त पुण्यसंयुक्त समवशरण स्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।

सुंदर है कोट दूसरा, शोभा को बढ़ावे।
चारों दिशा के मंदिरों के दर्श को पावे।।
आगे बनी है पुष्प वाटिका को जानिये।
शोभा बढ़े जिनदेव की, सब ये भी मानिये।।

ॐ ह्रीं तृतीय भूमि द्वारे वामदक्षिणान्तर्गलीषु चतुर्थभागप्रमाण द्वितीयवेदिका संयुक्त समवशरण स्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।

भूमि है तीसरी का वलय व्यास जू कहा।
रम्यक् हैं भूमि, घूमने को देव भी गया।।
चारों दिशाओं में ही, चार द्वार कहे हैं।
ऊंचे हैं द्वार तिन पर, कलशा भी धरे हैं।।

ॐ ह्रीं तृतीय भूमि चतुर्थ भागद्वितीयसाल (कोट) संयुक्त समवशरण स्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।

अन्तर गली में द्वार, अग्र भाग बताया।
रम्यक् है भूमि, घूमने को देव भी आया।।
चारों दिशाओं में ही, चार द्वार कहे हैं।
ऊंचे हैं द्वार तिन पर, कलशा भी धरे हैं।।

ॐ ह्रीं तृतीयभूमि चत्वारिंशद्भाग वलयव्यासपुष्पवाटिका संयुक्त स्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।

चारों दिशा में शोभते हैं चार चौपरा।
है आसपास वृक्ष लगे रंग है हरा।।
सोपान चारों ओर भी मणियों की है बनी।
बारहदरी में बारह द्वार शोभा है बढ़ी।।

ॐ ह्रीं तृतीयभूमौ अन्तरगल्याः द्वाराग्रे रम्य भूमिसंयुक्त समवशरण स्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।

बेला गुलाब केतकी और फूल चमेली।
उत्तम हैं फूल वाटिका में गंध सहेली।।
इसकी सुगंध से दिशाएं महकती रहें।
आकर के देव–देवियां भी क्रीड़ा को करें।।

ॐ ह्रीं तृतीयभूमौ पुष्पवाटिकाचतुर्दिक्षु अनेकरचनायुक्त चतुर्द्वारसंयुक्त समवशरण स्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।

चौपाई

रौंस के दोनों ओर खड़े हैं, क्रम से केले वृक्ष बड़े हैं।
सहज श्रेणी में बढ़ते जाएं, वृक्षों से शोभा बढ़ जाए।।
रौंस के दाहिनी ओर से सुनना, आम अनार वृक्ष है गुनना।
नींबू नरियल इमली जामुन, है बादाम बहु फल के गुन।।

ॐ ह्रीं तृतीयभूमौअन्तरगल्याः द्वाराग्रे ससीमद्वादशद्वारीयुक्त चतुः चतुष्कसंयुक्त समवशरण स्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।

दोहा

चारों विदिशा में बनी, रौंस वापिका ताल।
वहां सार बैठक बनी, तुंग कलश ध्वज जाल।।

ॐ ह्रीं अनेकप्रकोष्ठयुक्त तृतीयभूमिसंयुक्त समवशरण स्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं। ।9।।

उज्जवल नीर है क्षीर सम, सुन्दर कान्ति विशाल।
रत्नों की झालर बंधी, दर्शत होए निहाल।।

ॐ ह्रीं तृतीयभूमिपुष्पवाटिकामण्डपसंयुक्त समवशरण स्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।10।

सुंदर चार दिशाओं में, ऊँचे चार हैं द्वार।
उन पर कलशा हैं धरे, लगते हैं मनहार।।

ॐ ह्रीं तृतीयभूमि चत्वारिंशद्भाग वलयव्यासपुष्पवाटिकासंयुक्त समवशरण स्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।2।

वृक्षों की शाखा हिले, नीचे शिला सुथान।
मणिमय रत्न सुहावनी, मुनि विराजें आन।।

ॐ ह्रीं तृतीयभूमिरत्नखचितसीमाचतुरालवालसंयुक्त समवशरण स्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।12।

धरें योग अनगार जी, ज्ञान ध्यान में लीन।
मुक्ति सुंदर पाएंगे, निज में हो लवलीन।।

ॐ ह्रीं तृतीयभूमौ बेलादिअनेकपुष्पयुक्तवाटिका संयुक्त समवशरण स्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।13।

हैं प्रकोष्ठ मनहर बने, महिमा अतिशय जान।
चार दिशा झालर लगी, हुई कर्म की हान।।

ॐ ह्रीं तृतीयभूमौ अनेकपुष्पयुक्तपुष्पवाटिका संयुक्त समवशरण स्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।14।

उपदेशक वहां बैठते, भव्य ज्ञान को पाय।
अतिशय युक्त प्रकोष्ठ हैं, अपने कर्म खिपाये।।

ॐ ह्रीं तृतीय भूमौ उपेदशक संयुक्त समवशरण स्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।15।

शिला चन्द्र सी शोभती, मुनि विराजे आन।
कर्म गिरि को तोड़ने करें आत्म का ध्यान।।

ॐ ह्रीं तृतीयभूमौ देवादिक्रीड़ायुक्तपुष्पवाटिका संयुक्त समवशरण स्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।16।

अभ्यंतर बंगला बना, करें देवता वास।
नृत्य करें गुणगान भी, मुक्ति की हमें आस।।

ॐ ह्रीं तृतीयभूमौ सीमायाश्रेणीबद्धकदलीवृक्षसंयुक्त समवशरण स्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।17।

रौंस क्षेत्र में देवगण, घूमे फिरे प्रवाह।
प्रभु दर्शन के पुण्य से, मिले ज्ञान की राह।।

ॐ ह्रीं तृतीयभूमौसीमायाः वामदक्षिणभागयोंः अनेकवृक्ष फलपुष्प संयुक्त समवशरण स्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।18।

(चौपाई)

वरन–वरन की रचना सोहे, समवशरण सबका मन मोहे।
ज्ञानमयी फुलवारी महकें, मनमोहक पक्षी भी चहकें।।

समवशरण में बैठे जिनवर, साथ में इनके होते गणधर।
नित प्रति इनको शीश झुकाऊँ, चरणों में आ अर्घ्य चढ़ाऊँ।।

ॐ ह्रीं तृतीयभूमौ सीमापार्श्वद्वयनिम्बुसंगतर प्रमुखवृक्षसंयुक्त समवशरण स्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।19।

पुष्प वाटिका में चलें, खुशबू है मनहार।
जिनवर चरण को पूजते, मन में भक्ति बहार।।

ॐ ह्रीं पुष्पवाटिका भूमि संयुक्त समवशरण स्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।20।

चतुर्थ उपवन भूमि अर्घावली

आर्या छंद

चौथी भूमि में चौथी गली है, सुन्दर वरण सुहाता है।
वाम सु दक्षिण अंतरगली में, ऊं का द्वार सुभाता है।।

ॐ ह्रीं चतुर्थवीथिकायां वामदक्षिणान्तरवीथिकाद्वारसंयुक्त समवशरण स्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।1।

सुभग सुसुन्दर नाटकशाला, नर नारी को भाती है।
ऐसे जिन के समवशरण की, पूजा हमें सुहाती है।।

ॐ ह्रीं चतुर्थभूमौ सुभगनाट्यशाला संयुक्त समवशरण स्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।2।

श्री जिन के गुण गा गाकर के, सुर बालायें नृत्य करें।
हाव–भाव से पग रख रखके, मनहारी वह नृत्य करें।।

ॐ ह्रीं चतुर्थभूमौ द्वारेनाट्यशाला संयुक्त समवशरण स्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।3।

सुभग सु सुन्दर नाटकशाला, नर–नारी को भाती है।
ऐसे जिन के समवशरण की, पूजा हमें सुहाती है।।

ॐ ह्रीं चतुर्थभूमौ तुर्यभागप्रमाणद्वितीयदुर्गतृतीयवेदिकासंयुक्त समवशरण स्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।4।

आगे दूजा कोट बताया, भाग चार परमाण कहा।
तीजी वेदी नैन निहारे, चार भाग उर धार जरा।।

ॐ ह्रीं चतुर्थभूमौ द्वितीयदुर्गतृतीयवेदिका चत्वारिंशदि्भागोपवन संयुक्त समवशरण स्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।5।

चौथी उपवन भूमि है यह, भव्य जीव को भाती है।
ऐसे जिन के समवशरण की, पूजा हमें सुहाती है।।

ॐ ह्रीं चतुर्थभूमो आग्नेयदिशि अशोकवनेन नैऋतदिशि सप्तवर्णवनेन संयुक्त समवशरण स्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।6।

विदिशाओं में उपवन भूमि, शोभा अधिक बढ़ाती है।
वलय व्यास के भाग चवालिस, पवन युक्त हर्षाती है।।

ॐ ह्रीं चतुर्थभूमौ वायव्यदिशायां चम्पकवनेन ईशानदिशायाम् आम्रवनेन च संयुक्त समवशरण स्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।7।

ज्ञान के मोती प्रभु लुटाये, भर–भर सखियां लाती हैं।
ऐसे जिन के समवशरण की, पूजा हमें सुहाती है।।

ॐ ह्रीं चतुर्थभूमौ अशोक चम्पकसप्तपर्ण रसालवनमध्यस्थभूतवृक्षसंयुक्त समवशरण स्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।8।

त्रिभंगी छंद

आग्नेय दिशा में, स्वच्छ दशा में, वन अशोक जहं शोभत है।
नैऋत्य को जानो, निज पहचानों, सप्त पर्ण मन मोहत हैं।।

ॐ ह्रीं चतुर्थभूमौ अनेकरचनायुक्तचतुर्वनसंयुक्त समवशरण स्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।9।

वायव्य दिशा में, स्वच्द दशा में, चम्पक वन जहं शोभत है।
ईशान को जानो, निज पहिचानो, वृक्ष आम्र मन मोहत हैं।।

ॐ ह्रीं चतुर्थभूमौ अशोकवने द्वादशद्वारीसंयुक्त समवशरण स्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।10।

वृक्षो की जाति, मन भरमाती, भूप वृक्ष जहं शोभ रहे।
है प्रथम अशोका, चंप विशेषा, वृक्ष आम्र मन मोह रहे।।

ॐ ह्रीं चतुर्थभूमौ अनेकरचनायुक्तद्वादशद्वारीसंयुक्त समवशरण स्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।11।

महिमा है न्यारी, बारह द्वारी, भक्तों का मन रहता है।
गुण गान कराऊँ, भावना भाऊँ, जो कर्मों को हरता है।।

ॐ ह्रीं चतुर्थभूमौ द्वादशद्वार्याः उपरि अनेकरचनायुक्तत्रितल गवाक्षसंयुक्त समवशरण स्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं ।12।

बैठक की गोखे, परदा शोभे, रत्नों की माला लटकी।
जय जय सब ओर है, जय–जय शोर है, पापों की गठरी झटकी।।

ॐ ह्रीं चतुर्थभूमौ अशोकवने द्वादशब्दार्याः उपरि देवाद्यधिष्ठित गवाक्षसंयुक्त समवशरण स्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं ।13।

विद्याधर आवें, जिनगुण गावें, बैठक हर्ष बढ़ावत है।
हैं देव अधिष्ठित प्रभुवर तिष्ठित, आकर शीश नवावत हैं।।

ॐ ह्रीं द्वादशद्वार्याः आभ्यन्तरे दुर्गत्रयमध्ये पीठत्रयसंयुक्त समवशरण स्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं ।14।

दोहा

बनी है बारह दरी वहां, अभ्यंतर में जान।
चौक बीच त्रिकोट है, बीच त्रिपीठ महान।।

ॐ ह्रीं चतुर्थभूमौ जिनदेहप्रमाणतः द्वादशगुणातुंगाशोकवृक्ष युक्तपीठत्रयसंयुक्त समवशरण स्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं ।15।

तीन पीठ ऊपर लगा, राजा वृक्ष अशोक।
परम सरस गुणवान है, हरता सबका शोक।।

ॐ ह्रीं चतुर्थभूमौ विविधशोभायुक्ताशोकवृक्ष संयुक्त समवशरण स्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं ।16।

हीरा की है जड़ बनी–शाखा बनी है स्वर्ण।
'स्वस्ति' देख हर्षित हुई, सुंदर रूप सुवर्ण।।

ॐ ह्रीं विविधशोभायुक्ताशोकवृक्षसंयुक्त समवशरण स्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं ।17।

पत्र बने पन्ना रत्न, खिले लाल के फूल।
शोभा अतिशयवान है, न चुभते हैं शूल।।

ॐ ह्रीं चतुर्थभूमौ चतुर्वनेषु चतुर्भूपवृक्षशोभासंयुक्त समवशरण स्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं ।18।

त्रिभंगी

चारों विदिशा हैं, स्वच्छ दशा है, चारों वन भी शोभ रहे।
कुल चार अशोका, हवा का झोंका, देवों का मन मोह रहे।।

शोभा है न्यारी, देव संवारी, सब सौभाग्य को जगा रहे।
'स्वस्ति' हर्षित है, आकर्षित है, शीश चरण में झुका रहे।।

ॐ ह्रीं चतुर्थ भूमौ सहित समवशरण स्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।।

इत्याशिर्वादः पुष्पांजलिं क्षिपेत्।

अशोक वृक्ष स्थित जिन पूजा

स्थापना – गीता छंद

त्रैलोक्य दर्शी नाथ मम, जीवन सफल कर दो मेरा।
संसार में दर–दर भटकता, अब शरण पाया तेरा।।
भगवन् तुम्हीं, जिनवर तुम्हीं, सुख संपदा के नाथ हो।
मनहर अशोका, पर विराजे, तव चरण में माथ हो।।

ॐ ह्रीं अशोक वृक्षस्थ जिन प्रतिमाः अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननं, अत्र तिष्ठ–तिष्ठ ठः ठः स्थापनं, अत्र मन सन्निहितौ भव–भव वषट् सन्निधिकरणं।

गीता छंद

जंजाल में फंसकर प्रभो, निशदिन कमाया पाप है।
इस पाप मल प्रक्षाल हेतु, तव चरण की जाप है।।
आग्नेय दिश में है अशोका, जल ले हम पूजा करें।
संकट हरो सब पाप मेरे, तव चरण वंदन करें।।

ॐ ह्रीं आग्नेयदिशिअशोक वृक्षस्थ जिनप्रतिमाभ्यो जलं निर्व. स्वाहा।

न चाह है न कोई इच्छा, बस तेरा ही ध्यान हो।
औ मैं अशोक की छांव बैठूँ, मुझको केवल ज्ञान हो।।
आग्नेय...

ॐ ह्रीं आग्नेयदिशिअशोक वृक्षस्थ जिन प्रतिमाभ्यश्चंदनं निर्व. स्वाहा।

अक्षय तुम्हीं अविनाशी तुम, अक्षय तुम्हारा धाम है।
अधिपती बनूँ अविनाशी पद का, मिल रहा विश्राम है।।
आग्नेय...

ॐ ह्रीं आग्नेयदिशिअशोक वृक्षस्थ जिन प्रतिमाभ्यो अक्षतं निर्व. स्वाहा।

पुष्प मनहर मन लुभावे, काम ने उलझाया है।
पुष्पों से पूजा हम करें, भक्तों का मन हर्षाया है।।
आग्नेय...

ॐ ह्रीं आग्नेयदिशिअशोक वृक्षस्थ जिन प्रतिमाभ्यो नैवेद्यं निर्व. स्वाहा।

दीप जग–मग ज्योति, निज ज्ञान का दीपक जले।
अज्ञान हर विज्ञान पावे, आत्म निज ज्योति जले।।
आग्नेय...

ॐ ह्रीं आग्नेयदिशिअशोक वृक्षस्थ जिन प्रतिमाभ्यो दीपं निर्व. स्वाहा।

दुष्ट कर्मों ने सताया, जग से हम हैरान हैं।
हम ध्यान आतम का करें, होवे मेरा कल्याण है।।
आग्नेय...

ॐ ह्रीं आग्नेयदिशिअशोक वृक्षस्थ जिन प्रतिमाभ्यो धूपं निर्व. स्वाहा।

भाग्य में सौभाग्य न था,फल बिना भटका फिरा।
मैं खाके जग की ठोकरों को, अब चरण में आ गिरा।।
आग्नेय...

ॐ ह्रीं आग्नेयदिशिअशोक वृक्षस्थ जिन प्रतिमाभ्यः फलं निर्व. स्वाहा।

चारित्र ना पालन किया, और ज्ञान मुझसे दूर है।
औ दृष्टि ना सम्यक हुई, अवगुण भरे भरपूर है।।
आग्नेय...

ॐ ह्रीं आग्नेयदिशिअशोक वृक्षस्थ जिन प्रतिमाभ्यो अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

सप्तपर्ण वन वृक्ष स्थित जिन पूजा (नैऋत्य दिशा)

स्थापना – शंभू छंद

सम अवसर जिसमें मिलता है, शुभ समवशरण कहलाता है।
दु:खों के सागर से निकाल, सुख अमृत पान कराता है।।
निज की दृष्टि निज में रखते, फिर भी सब जीवों को देखें।
पावन महिमा को गाकर हम, निज का कारण निज में लेखें।।

दोहा

सप्त पर्ण वन में प्रभु, है अशोक की छांव।
दिश नैऋत्य में राजते, देते सब को ठांव।।

ॐ ह्रीं नैऋत्य दिशि सप्तपर्ण वन वृक्षस्थ जिन प्रतिमाः अत्र अवतर अवतर संवौषट आहवाननं, अत्र तिष्ठ–तिष्ठ ठः ठः स्थापनं, अत्र मम सन्निहितौ भव–भव वषट् सन्निधिकरणं।

तर्ज (चौबीसी पूजा)

मन के मल से दुर्गंध, निशदिन है आती।
निर्मलता मन में होय, तो पूजा भाती।।
है सप्तपर्ण नव दीप, वृक्ष अशोक लगा।
भावो से पूजूँ नाथ, धर्म स्वभाव सगा।।

ॐ ह्रीं नैऋत्य दिशि सप्तपर्ण वन वृक्षस्थ जिन प्रतिमाभ्यो जलं निर्वपामीति स्वाहा।

मकड़ी सा जाल बनाया, खुद फंसता जाता।
चिन्ता ने जलाया नाथ, एक न सुख पाता।।
है सप्त पर्ण नव ...

ॐ ह्रीं नैऋत्य दिशि सप्तपर्ण वन वृक्षस्थ जिन प्रतिमाभ्यो चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा।

यह आंख होयेगी बंद, फिर भी पद चाहें।
अक्षय पद की है चाह, मुक्ति पथ राहें।।
है सप्त पर्ण नव ...

ॐ ह्रीं नैऋत्य दिशि सप्तपर्ण वन वृक्षस्थ जिन प्रतिमाभ्यो अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

आतम है खुशबूदार, फूल तो मुरझाता।
सुंदर चेतन का रूप, तप से खिल जाता।।
है सप्त पर्ण नव ...

ॐ ह्रीं नैऋत्य दिशि सप्तपर्ण वन वृक्षस्थ जिन प्रतिमाभ्यः पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

रसना का रस हम घोल, निशदिन पीते हैं।
तृप्ती ना होती नाथ, फिर भी जीते हैं।।
है सप्त पर्ण नव ...

ॐ ह्रीं नैऋत्य दिशि सप्तपर्ण वन वृक्षस्थ जिन प्रतिमाभ्यो नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अंतर की आंख न खोल, बाहर भटक रहा।
अंतर में ज्ञान प्रकाश, जग में दुःख रहा।।
है सप्त पर्ण नव ...

ॐ ह्रीं नैऋत्य दिशि सप्तपर्ण वन वृक्षस्थ जिन प्रतिमाभ्यो दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

कर्मों ने छिपाया ज्ञान, ढूंढू मैं बाहर।
तप से मिटता अज्ञान, करता न आदर।।
है सप्त पर्ण नव ...

ॐ ह्रीं नैऋत्य दिशि सप्तपर्ण वन वृक्षस्थ जिन प्रतिमाभ्यो धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

हो सपना सुख साकार, यह पुरूषार्थ किया।
सुख मिले धर्म आधार, यह न ज्ञान लिया।।
है सप्त पर्ण नव ...

ॐ ह्रीं नैऋत्य दिशि सप्तपर्ण वन वृक्षस्थ जिन प्रतिमाभ्यः फलं निर्वपामीति स्वाहा।

आया था मुट्ठी बांध, कुछ न साथ गया।
तप दर्शन ज्ञान चरित्र, इनसे दूर भया।।
है सप्त पर्ण नव दीप, वृक्ष अशोक लगा।
मैं अर्घ्य से पूजूं नाथ, धर्म स्वभाव सगा।।
है सप्त पर्ण नव ...

ॐ ह्रीं नैऋत्य दिशि सप्तपर्ण वन वृक्षस्थ जिन प्रतिमाभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

चंपक वन स्थित जिन पूजा

वायव्य दिशा

स्थापना – गीता छंद

अग्नि तपाये स्वर्ण को जब, वह खरा हो जाता है।
यह जीवन तप अग्नि में तपकर, शुद्ध शिव बन जाता है।।
ये पूजा अर्चा और वंदन, ध्यान आतम का करे।
सार्थक बने इस से ही जीवन, कर्म दुर्गति को हरे।।

ॐ ह्रीं वायव्य दिशायां चम्पक वन वृक्षस्थ श्री जिन प्रतिमाः अत्र अवतर अवतर संवौषट आह्वाननं, अत्र तिष्ठ–तिष्ठ ठः ठः स्थापनं, अत्र मम सन्निहितो भव–भव वषट् सन्निधिकरणं।

छंद भुजंग प्रमात (नरेन्द्रं फणीन्द्रं)

हाथों में लेकर के, जल हम चढ़ायें।
भावों की निर्मलता आ के बढ़ाये।।
चंपक के वन में अशोका है राजे,
वायव्य दिशा में प्रभु जी विराजे।।

ॐ ह्रीं वायव्य दिश चम्पक वन वृक्षस्थ श्री जिन प्रतिमाभ्यो जलं निर्वपामीति स्वाहा।

जीवन पहेली को सुलझाने आया,
अपने प्रभु को मनाने मैं आया।
चंपक के वन में अशोका है राजे,
वायव्य दिशा में प्रभु जी विराजे।।

ॐ ह्रीं वायव्य दिश चम्पक वन वृक्षस्थ श्री जिन प्रतिमाभ्यश्चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

कर्मों ने जीवन को क्षयवत किया है,
प्रभु आप ने सौख्य अक्षत लिया है।
चंपक के वन में अशोका है राजे,
वायव्य दिशा में प्रभु जी विराजे।।

ॐ ह्रीं वायव्य दिश चम्पक वन वृक्षस्थ श्री जिन प्रतिमाभ्यो अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

रोगों के कांटों में निशदिन उलझता,
ढल जाये उम्र न फिर भी सुधरता।
चंपक के वन में अशोका है राजे,
वायव्य दिशा में प्रभु जी विराजे।।

ॐ ह्रीं वायव्य दिश चम्पक वन वृक्षस्थ श्री जिन प्रतिमाभ्यः पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

आतम का भोजन कभी नाहिं कीना,
रसना रसों का सदा स्वाद लीना।
चंपक के वन में अशोका है राजे,
वायव्य दिशा में प्रभु जी विराजे।।

ॐ ह्रीं वायव्य दिश चम्पक वन वृक्षस्थ श्री जिन प्रतिमाभ्यो नैवेद्यं निर्वापामीति स्वाहा।

आतम में ज्ञान का फैला उजाला,
प्रभु तेरे चरणों की फेरूँ मैं माला।
चंपक के वन में अशोका है राजे,
वायव्य दिशा में प्रभु जी विराजे।।

ॐ ह्रीं वायव्य दिश चम्पक वन वृक्षस्थ श्री जिन प्रतिमाभ्यो दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

कर्मों की धूप सदा है सताती,
तपस्या करम सेना को है भगाती।
चंपक के वन में अशोका है राजे,
वायव्य दिशा में प्रभु जी विराजे।।

ॐ ह्रीं वायव्य दिश चम्पक वन वृक्षस्थ श्री जिन प्रतिमाभ्यो धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

हाथों की रेखा करम फल बताती,
पूरी ये बातें सही नहीं पाती।
चंपक के वन में अशोका है राजे,
वायव्य दिशा में प्रभु जी विराजे।।

ॐ ह्रीं वायव्य दिश चम्पक वन वृक्षस्थ श्री जिन प्रतिमाभ्यः फलं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्घ्यों से जीवन की ज्योति जलायें,
अर्घ्यों की थाली चरण ले के आये।
चंपक के वन में अशोका है राजे,
वायव्य दिशा में प्रभु जी विराजे।।

ॐ ह्रीं वायव्य दिश चम्पक वन वृक्षस्थ श्री जिन प्रतिमाभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

आम्रवनस्थ जिन पूजा प्रारंभ (ईशान दिशा)

त्रिभंगी छंद (स्थापना)

हो सम्यक ज्ञानी, त्रिभुवन ध्यानी, ज्ञानामृत पिलवाया है।
हो करूणा दानी, हितमित वाणी, आनंद फूल खिलाया है।।
स्थित हो वन में, आम्र चमन में, भक्त तुम्हें प्रणाम करें।
बहे ज्ञान की गंगा, मन हो चंगा, ध्यान तेरा सब कर्म हरे।।

ॐ ह्रीं ईशान दिशि आम्र वन वृक्षस्थ श्री जिन प्रतिमाः अत्र अवतर अवतर संवौषट आह्वाननं, अत्र तिष्ठ–तिष्ठ ठः ठः स्थापनं, अत्र मम सन्निहितौ भव–भव वषट् सन्निधिकरणं।

शंभू छंद

बहती रहती सरिता हर पल, इससे जल निर्मल रहता है।
जब जैसे निर्मल भाव बने, शांति से कर्म को सहता है।।
आमों के वन में स्थित हैं, उन जिनवर को करता प्रणाम।
हो मान गलित मेरा प्रभुवर, जीवन की न हो दुखद शाम।।

ॐ ह्रीं ईशान दिशियाम् आम्र वनवृक्षस्थ श्री जिन प्रतिमाभ्यो जलं निर्वपामीति स्वाहा।

चंदन ने तन शीतल कीना, पर आतम पाप से भरा हुआ।
सर्दी में भी मन गरम रहे, पर शीतल धर्म न कभी छुआ।।
आमों के वन में स्थित है ...

ॐ ह्रीं ईशान दिशियाम् आम्र वनवृक्षस्थ श्री जिन प्रतिमाभ्यश्चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

आतम अक्षर अविनाशी है, तन तो जीता मरता रहता।
अक्षत थाली भर ले आया, क्षयवत पद से अब है तरता।।
आमों के वन में स्थित है ...

ॐ ह्रीं ईशान दिशियाम् आम्र वनवृक्षस्थ श्री जिन प्रतिमाभ्यो अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

सुंदर–सुंदर पुष्पों ने जग जीवन को नित्य लुभाया है।
इस काम वासना से छूटें, पुष्पों का थाल भराया है।।
आमों के वन में स्थित है ...

ॐ ह्रीं ईशान दिशियाम् आम्र वनवृक्षस्थ श्री जिन प्रतिमाभ्यः पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

मन से कीना, वच से कीना, तन से भोजन नित करते हैं।
पर पेट रहे निशदिन खाली, नैवेद्य समर्पित करते हैं।।
आमों के वन में स्थित है ...

ॐ ह्रीं ईशान दिशियाम् आम्र वनवृक्षस्थ श्री जिन प्रतिमाभ्यो नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दीपक की ज्योति दम दमके, आतम उजियारा ना करती।
जिन ज्ञान दीप की ज्योति जले, इसलिए दीप अर्पित करती।
आमों के वन में स्थित है ...

ॐ ह्रीं ईशान दिशियाम् आम्र वनवृक्षस्थ श्री जिन प्रतिमाभ्यो दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

आठों कर्मों के घेरे में, मैं अनादि काल से पड़ा हुआ।
इन कर्मों का ही धुआं उड़े हमने प्रभु तेरा ध्यान किया।।
आमों के वन में स्थित है ...

ॐ ह्रीं ईशान दिशियाम् आम्र वनवृक्षस्थ श्री जिन प्रतिमाभ्यः धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

जो अशुभ कर्म फल अशुभ गति, शुभ से शुभ ही मिलता जाता।
कर्मों को नित करता रहता, फल क्या है ध्यान नहीं जाता।
आमों के वन में स्थित है ...

ॐ ह्रीं ईशान दिशियाम् आम्र वनवृक्षस्थ श्री जिन प्रतिमाभ्यः फलं निर्वपामीति स्वाहा।

जल चंदन अक्षत पुष्प चरू दीपक की ज्योति ले आया।
आठों द्रव्यों को मिला लिया, अर्घ्यों का संगम है भाया।।
आमों के वन में स्थित है ...

ॐ ह्रीं ईशान दिशियाम् आम्र वनवृक्षस्थ श्री जिन प्रतिमाभ्यो अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

समुच्चय जयमाला

(चतुर्दश दिशा संबंधी वृक्ष संबंधी)

दोहा

चारों ओर चतु भूमि है, वृक्ष फूल फल जान।
उपवन में जिन राजते, शत शत करूं प्रणाम।।

पद्ध छंद

उपवन भूमि है अति विशाल, दर्शत मन होता है खुशाल।
सुंदर–सुंदर वृक्षों के फूल, जाकर के सब कुछ जाते भूल।
वृक्षों की महिमा है अपार, जीवन कर देते हैं निसार।
आपस में ईर्ष्या द्वेष नही, पृथ्वी अंदर की थाह नहीं।
मानव लंबे हैं पास खड़े, इसलिए वृक्ष वे कहां बढ़े।
मानव के साथ में वृक्ष रहें, मरने पर साथ भी यही जलें।
फिर मानव भी दानव बनता, पेड़ों से न शिक्षा लेता।
वृक्षों में भूप अशोक कहा, इसके नीचे जिन ज्ञान बहा।
चारों दिश में हैं चार खड़े, प्रभु के कारण बन जाय बड़े।
जय तीन पीठ सुंदर महान, शोभे श्री गंध कुटी सुजान।
उस पर सिंहासन है प्यारा, और कमलज रचा न्यारा–न्यारा।
उस पर प्रतिमा शोभा पाये, भक्ति में भक्त वहां जाये।
चारों दिश में ही राज रहे, त्रिभुवन के ईश्वर साज रहे।
जय तीन छत्र फिरते हैं शीश, दर्शन से मिलता शुभाशीष।
अठ प्रातिहार्य चमके महान, तीर्थंकर देवें आत्मज्ञान।
जिनवर के गुण का गान करें, जय जय करके सम्मान करें।
पृथ्वी फल फूल चढ़ाती है, वीणा यश गान भी गाती है।

दीपक की ज्योति प्रणाम करे, ज्ञानी जग का अज्ञान हरे।
तप करके अमृत पाया है, भक्तों को ज्ञान लुटाया है।
तीनों लोकों के आप ईश, चरणों में झुकता रहे शीश।
उपवन की उपमा कौन कहे, उपवन में जाकर शांति लहे।
उपवन में सुंदर फूल खिले, उपवन में प्रभु का ज्ञान मिले।
तुम तपः पूत चिद् शाश्वत हो, आराध्यों के आराधक हो।
तुम काम क्रोध को जीत लिया, जय राग द्वेष को दूर किया।
भक्तों के हो तुम कल्पवृक्ष, भक्तों को हो तुम रक्ष–रक्ष।
तेरे चरणों का वरण करूँ, चरणों में आकर शीश धरूँ।
'स्वस्ति' उत्थान की राह मिले, बस केवल ज्ञान का दीप जले।

दोहा

वन उपवन में जाय कर, ज्ञान दीप जग जाये।
सौख्य महा संपत्ति मिले, शत शत शीश नवाय।।

ॐ ह्रीं चतुदिक्षु सम्बन्धी चतुर्थोपवन वृक्षस्थ श्री जिन प्रतिमाभ्यो जयमालार्घ निर्वपामीति स्वाहा।

दोहा

भगवन कुछ न लेते हैं, देते अमृत ज्ञान।
जीवन अमृतमय हुआ, बारंबार प्रणाम।।
समवशरण शुभ पाठ को, जो भी भव्य कराय।
जीवन चमन खिलाय कर, मुक्ति सुंदरी पाय।।

।।इत्याशीर्वादः पुष्पांजलिं क्षिपेत्।।

पंचम भूमि (ध्वज भूमि) अर्घ्यावली

चौपाई

भूमि पंचम गली बताई, बाम दाहिने देखो भाई।
अंदर द्वार तीसरी वेदी, चार भाग परमाण जु दे दी।।

ॐ ह्रीं पंचमगल्यां वामदक्षिणभागयोः आभ्यन्तरगल्यां चतुर्थ भागप्रमाणान्तरवेदिका संयुक्त समवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।1।

कोट तीसरा भाग चार हैं, स्वर्ग वर्ण शोभे अपार है।
पंचम भूमि सुंदर भारी, ध्वज फहरे जिन गुण तैयारी।।

ॐ ह्रीं पंचमभूमौ चतुर्थभागस्वर्णमयमहासुन्दरतृतीय सालसंयुक्त समवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।2।

भूमि पांचवीं भाग चवालिस, वलय व्यास पहचाने जे ईश।
वेदी कोट विशाल बने हैं, नाना विधि चित्राम जजे हैं।।

ॐ ह्रीं पंचमभूमौ चतुः चत्वारिंशद भागवलयव्यासवेदिकाचित्र समूह संयुक्त समवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।3।

मन हारी चित्रों की क्यारी, तीर्थंकर के भव के धारी।
चित्र निहार ज्ञान को पायें, चरणों में जा शीश झुकायें।।

ॐ ह्रीं पंचमभूमौ समवशरणोशालवेदिकायां तीर्थंकर पूर्वभव चित्र संयुक्त समवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।4।

स्वप्नों को जिन माता देखे, राजा से फिर फल को पूछे।
परंपरा चित्रों की सुंदर, सुंदर चित्र बने हैं अंदर।।

ॐ ह्रीं पंचमभूमौ शालवेदिकाचित्र संयुक्त समवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।5।

तीर्थंकर का न्हवन करे हैं, क्षीर–नीर से कलश भरे हैं।
ऐरावत पर चढ़कर जायें, हम चरणों में शीश झुकायें।।

ॐ ह्रीं पंचमभूमौ जिनस्नपनचित्र संयुक्त समवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।6।

चक्रवर्ती की सेना देखो तीर्थंकर महिमा को लेखो।
वैभव पुण्य बड़ा भारी है, झुके चरण दुनिया सारी है।।

ॐ ह्रीं पंचमभूमौ शालवेदिका चक्रवर्तीविभव चित्रसंयुक्त समवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।7।

नारायण बलभद्र बनाया, प्रतिनारायण को दर्शाया।
भवों–भवों के चित्र दिखाये, इन चित्रों से शिक्षा पाये।।

ॐ ह्रीं पंचमभूमौ शालवेदिकायांनारायणबलभद्रादिविभव चित्रसंयुक्त समवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।8।

भोग भूमि को भी दिखलाया, उत्तम–मध्यम, जघन्य बताया।
युगल जोड़े इसमें रहते हैं, तीव्र कषाय नहीं करते हैं।।

ॐ ह्रीं पंचमभूमौ शालवेदिकायां भोगभूमियुगलचित्र संयुक्त समवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।9।

कल्पवृक्ष वस्तु को देवें, चिंता सारी वे हर लेवें।
प्रथम स्वर्ग का इन्द्र दिखाया, दूजे तीजे को बतलाया।।

ॐ ह्रीं पंचमभूमौ संयुक्त समवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।10।

स्वर्गोंके मनहारि चित्र हैं, पुण्य की महिमा भी विचित्र है।
इन्द्राणी प्रभु सेवा करती, रतनमयी गहने तन धरती।।
रत्नों की जंजीर चढ़ाये, आभूषण स्वर्गों से लाये।
वस्त्राभूषण जिसमें आवे, मंजूषा विशेष कहावे।

ॐ ह्रीं पंचमभूमौ प्राक्चतुःस्वर्गमध्यमानस्तम्भे सुन्दरवस्त्रायुक्त मंजूषाद्वय संयुक्त समवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।11।

खुश हो वस्त्रों को पहनाती, आभूषण से उन्हें सजाती।
यही चित्र मन को हरते हैं, समवशरण सुंदर करते हैं।।

ॐ ह्रीं पंचमभूमौ कोटशालवेदिकोपरि त्रितलदेवी देवयुक्ताविष्ठर संयुक्त समवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।12।

आगे–आगे सागर जानो, बनी कुभोग भूमि को मानो।
वन मानुष जैसे बनते हैं, हाथी, घोड़ा बैल घने हैं।।

ॐ ह्रीं पंचमभूमौ सिंहादिदशभेहचिन्हयुक्तध्वजासंयुक्तसमवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।13।

वेदी में है चित्र बनाये, आस–पास सुंदर झलकाये।
वेदी कोट विशाल के ऊपर, गुरज कंगूरा बने हैं तापर।।

ॐ ह्रीं पंचमभूमौ एकदिक्सम्बन्धी अशीत्यधिकसहस्त्रध्वजा संयुक्त समवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।14।

अडिल्ल छंद

ऊपर सुंदर बैठक को जानिये, उन पर सुंदर चित्र बने हैं मानिये।
कलशा रवि ध्वजा लहरायेजी, जय जय करते देव देवियां आयेजी।।

ॐ ह्रीं चतुर्दिक्षुत्रिशतविंशत्यधिकचतुः सहस्त्रमहाध्वजासंयुक्त समवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।15।

ध्वजा भूमि में ध्वज ही ध्वज को देखिये।
सब पर सुंदर चिन्ह बने हैं पेखिये।।
सिंह हाथी वृष मोर गनी माला बनी।
चक्र हंस गरूड़ ओ देव कमल के भेद ही।।

ॐ ह्रीं चतुर्दिक्षु महाध्वजामिः सह 466560 लघुध्वजासंयुक्त समवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।16।

एक ध्वजा पर चिनह एक ही है बना।
इकसो आठ ध्वजा ही क्रम से है तना।
एक सहस आठ ध्वजा साथ लहरायेजी।
हो प्रसन्न हम मिलकर शीश झुकाये जी।।

ॐ ह्रीं पंचमभूमौ चतुर्दिक्षु 470880 ध्वजासंयुक्त समवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।17।

चारो ओर ध्वजा की पंक्ति शोभती।
देव देवियां मिलकर यश को गावती।।
सहस–सहस से वह शोभा को जानिये।
मिले शांति प्रभु के चरणों में मानिये।।

ॐ ह्रीं वृषभजिनस्य अष्टाशीत्यंगुलप्रमाण सुवर्णमयध्वजास्तम्भ संयुक्त समवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।18।

महाध्वजा के संग में लघु को जानिये।
चार लाख छोटी चहूं दिश की मानिये।।
महिमा समवशरण की अनुपम है महा।
वर्णन कैसे करूँ शक्ति भी है कहाँ।

ॐ ह्रीं पचंमभूमौ ध्वजासमूहसंयुक्त समवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।19।

चार सहस अरू तीन सो बीस को मानिये।
महा ध्वजा चारों दिश की परमानिये।।
ध्वज देखत मन हर्षित होय विभोर जी।
लहर लहर लहराये करती शोर जी।।
पीत वर्ण हो गया गगन का जानिये।
'स्वस्ति' वर्णन गाये बात ये मानिये।।

ॐ ह्रीं चतुर्दिक्षु त्रिशत् विंशत्यधिक चतुःसहस्त्र महाध्वजा संयुक्त समवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।20।

ध्वजा के खंभे स्वर्णमयी हैं शोभते।
सुंदरता जीवों के मन को मोहते।।
अट्ठासी अंगुल के बने प्रमाण जी।
चरणों में प्रभु के मिलता है सार जी।।

ऊपर का वह दण्ड, मणिमय है बना।
धनु पच्चीस के अंतर में लहरे ध्वजा।।
लहर लहर लहराये, ध्वजा शुभ मानिये।
प्रभु चरणों का है प्रताप, यह जानिये।।

ॐ ह्रीं पंचमभूमौ विविधरचना संयुक्त समवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।21।

चौपाई

सुंदर भूमि ध्वजा है सुंदर, बाल वापि गिरी जाय समंदर।
जाते वहां सभी नर नारी, देव करें क्रीड़ाएं न्यारी।।
वृक्ष खड़े फल फूल सुजानो, झुकी डालियां तीर कमानो।
कल्प वृक्ष की बहती धारा, मनवांछित होवेगा सारा।।
मुनिवर वहां विहार भी करते, गुण देते दोषों को हरते।
दुष्ट कर्म के आप विनाशी, इससे हुए आप अविनाशी।।
भव्य जीव चरणों में आवे, आकर तेरा ध्यान लगावे।
'स्वस्ति' तुम्हें त्रिकाल ही ध्यावे, आकर चरणन शीश झुकावे।।

दोहा

पंचम भूमि दर्श से, पंचम गति को पाये।
पंचम ज्ञान मिले मुझे, शत शत शीश नवाये।।

ॐ ह्रीं पंचमभूमौ चतुः चत्वारिंशद समवशरणस्थित जिनेन्द्राय पूर्णार्घ्यं।

पंच महाव्रत धार कर, पंच पाप विनशाय।
पांचों समिति पालकर, चरणन शीश झुकाय।।

इत्याशीर्वादः पुष्पाजंलिं छिपेत्।

षष्ठम् कल्प भूमि अर्घ्यावली

दोहा

षष्ठी भूमि की गली, दांयी बांयी ये जान।
अंदर द्वार के पास में, नाटक शाला मान।।

ॐ ह्रीं षष्ठ भूमेः गल्यां वामदक्षिण भागे अन्तर–अन्तर गल्याः द्वारे नाट्यशाला संयुक्त समवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।1।

तीज कोट के भाग में, चौथी वेदी जान।
भूमि चवालिस में वलय, व्याप्त दृगों को आन।।

ॐ ह्रीं तुर्यभागतृतीयसालभागद्वयचतुर्थवेदिकामध्ये चतुः चत्वारिंशद्भागवलयव्यास भूमि संयुक्त समवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।2।

तृतीय कोट कंचन वरण, ध्वज कंगूरा ज्ञान।
तिहरी बैठक गोख में, नये देवधर ध्यान।।

ॐ ह्रीं विविधरचनायुक्ततृतीयसालसंयुक्त समवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।3।

चतुवेदी है रूपवती, पीत वर्ण परमाण।
बनी बैठकें गुरज में, बारंबार प्रणाम।।

ॐ ह्रीं विविधरचनायुक्त चतुर्थवेदिकासंयुक्त समवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।4।

बीच भूमि वर्णन सुनो, विदिशा वन के मांहि।
कल्पवृक्ष भी शोभते, दुःख संकट कुछ नांहि।।

ॐ ह्रीं षष्ठभूमि परितः कल्पवृक्ष संयुक्त समवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।5।

मन वांछित वस्तु दिये, कल्पवृक्ष के वृक्ष।
दश भेदों के सहित हैं, कार्य करन में दक्ष।।

ॐ ह्रीं षष्ठभूमौ मनोवांछितवस्तुदायक कल्पवृक्षसंयुक्त समवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।6।

चौपाई

सीखो तुम वृक्षों से देना, कभी किसी से कुछ न लेना।
कल्पवृक्ष मन वांछित देते, नहीं किसी से कुछ भी लेते।।
बर्तन देते, घर भी देते, आभूषण औ वस्त्र भी देते।
भोजन पानी जग–मग ज्योति, सुंदर दे माला के मोती।।
बाजे दे खुशियां दिखलावें, दीपक तम को दूर भगावें।
कल्पवृक्ष सम न है कोई, 'स्वस्ति' यह सब पुण्य कमाई।।

ॐ ह्रीं षष्ठभूमि दशप्रकार कल्पवृक्षसंयुक्त समवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं।7।

नरेन्द्र छंद

चारों दिश में कल्पवृक्ष हैं, मन्दिर भी सुखकारी।
ताल वापिका शोभा पाये, शोभित है त्रिपुरारी।।

ॐ ह्रीं षष्ठभूमौ वापिकाद्रहमंदिर संयुक्त समवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं ।8।

चन्द्रकांत स्फटिक शिलामणि, इस पर मुनिवर राजें।
ध्यान आतमा का नित करके, जिन आतम में साजें।।

ॐ ह्रीं षष्ठभूमौ ध्यानस्थमुनिगणयुक्तचन्द्रकांताशिलासंयुक्त समवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं ।9।

कर्मराज यह मोह बलि है, इस पर आप प्रहारी।
महा पुण्य मय संयम धारी, कर्म मेघ को टारी।।

ॐ ह्रीं षष्ठभूमौ आत्मध्यानयुक्तपुण्यसम्पादकमहामुनिसंयुक्त समवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं ।10।

समवशरण में भविजन आवें, गुरु उपदेश सुनावें।
ऐसे आचारज गुरु वर को, हम सब शीश झुकावें।।

ॐ ह्रीं षष्ठभूमौ विविधस्थानेषु धर्मोपदेशकदिगम्बरयतिसंयुक्त समवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं ।11।

सुंदर पर्वत बने वहां पर, उन पर मुनिवर राजे।
ध्यानाग्नि में पाप नष्ट कर, आतम में ही साजे।।

ॐ ह्रीं षष्ठभूमौ ध्यानारूढ़यतियुक्तपर्व संयुक्त समवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं ।12।

क्रीड़ा करने देवों के गण, उस वन में भी आवें।
पूजत मुनिवर के ये चरणा, उनका मन हर्षावें।।

ॐ ह्रीं षष्ठभूमौ स्वरोपकारदिगम्बरयतिसंयुक्त समवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं ।13।

चारों दिश में चार ही वन हैं, भूप मध्य में रहता।
दर्शत ताप भगे सब ही के, झरना सुख का बहता।।

ॐ ह्रीं षष्ठभूमौ चतुर्दिशासु वनमध्ये चतुभूपवृक्षसंयुक्त समवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं ।14।

मन वच काय त्रियोग सम्हारो, भूप वृक्ष को देखो।
बारह दरी वहां पर रहती, अतिशय प्रभु का लेखो।।

ॐ ह्रीं विविधरचनायुक्तद्वादशद्वारीसंयुक्त समवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं ।15।

कुरसी जैसी बनी वहां पर, स्वर्ण रतनमय शोभे।
पुण्यवान जाकर सुख भोगे, पापी कुछ न देखे।।

ॐ ह्रीं विविधरचनायुक्तद्वादशद्वारीसंयुक्त समवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं ।16।

ऊंचे–ऊंचे शिखर बुलाते, जग मग मणियां चमके।
उन पर ध्वजा लहर लहराती, आतम प्रभु का दमके।।

ॐ ह्रीं जिनेन्द्रगुणगायकदेवयुक्तद्वादशद्वारीसंयुक्त समवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं ।17।

सुंदर–सुंदर, ऊंचे–ऊंचे, देव गुणों को गाते।
अतिशय महिमा तेरी सुनकर, दर्श को हम भी आते।।

ॐ ह्रीं द्वादशद्वारी सालत्रयमध्य सिंहासनत्रयपीठत्रयसंयुक्त समवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं ।18।

द्वादश द्वार है शोभा पाये, चौंक मध्य में आवे।
कोट तीसरा पीठ तीन हैं, सिंहासन मन भावे।।

ॐ ह्रीं पीठत्रयोपरि भूपवृक्षसंयुक्त समवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं ।19।

भवियों की यह पीठ बनी है, जग मग शोभा पावे।
तीनों के ऊपर भी देखो, भूप वृक्ष झलकावे।।

ॐ ह्रीं विविध रचनायुक्त भूपवृक्ष संयुक्त समवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं ।20।

जड़ हीरे की बनी हुई है, मणिमय शाखा जानो।
पन्नों के पत्ते हैं शोभित, चारों सीधे मानो।।

ॐ ह्रीं विविधपुष्पयुक्त भूपवृक्ष संयुक्त समवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं ।21।

जिनवर के सम ऊंचा समझो, बारह गुना ये जानो।
शोभा सुंदर समवशरण की, मोहे मन ये मानो।।

ॐ ह्रीं षष्ठभूमौ जिनशरीरद्वादशगुणोच्चभूपवृक्षसंयुक्त समवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं ।22।

वृक्षों के चारों दिश में ही, जिन दर्शन अपना देवें।
मानस्तंभ से मान गलित हो, कर्म आपना खोवें।।

ॐ ह्रीं षष्ठभूमिचतुर्दिश चतुःचतुः मन्दिरस्थित भूपवृक्ष संयुक्त समवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं ।23।

एक वृक्ष का वर्णन करके, चारों दिश ये जानो।
तीर्थंकर का वैभव है ये, बातें प्रभु की मानो।।

ॐ ह्रीं प्रथम भूपवृक्ष समानशेष भूपवृक्षत्रय संयुक्त समवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं ।24।

मेरू वृक्ष आग्नेय दिशा में, नैऋत्य मंदार खड़ा।
वायव्य में संतान संतति, पारिजात ईशान बड़ा।।

ॐ ह्रीं षष्ठभूमौ चतुर्विदिशासु मेरूवृक्षादिचतुर्भूपवृक्षसंयुक्त समवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं ।25।

मेरूभूप कल्पवृक्ष स्थित जिनपूजा

स्थापना (शंभू छंद)

तुम परम ज्योति तुम परम धाम, परमेश्वर तुम परमात्मा हो।
तुम भक्तों के हो ज्ञान दीप, सच्चे भक्तों की आत्मा हो।।
कर्मों के बादल घिर आये, आकर प्रकाश को प्रगटाओ।
शुभ समवशरण पूजा करते, हृदय में दीप जगा जाओ।।

ॐ ह्रीं मेरूवृक्ष चतुर्दिशि चतुर्जिन मंदिर प्रतिमाभ्यः अत्र अवतर अवतर संवौषद् आह्वाननं, अत्र तिष्ठ–तिष्ठ ठः ठः स्थापनं, अत्र मम सन्निहितो भव – भव वषट् सन्निधिकरणं।

शंभू छंद

कुछ भेद भाव सा प्रकट हुआ, शुभ धर्म ध्यान में भेद किया।
धर्मों के तत्व को ना समझा, जल चढ़ा प्रभु का ध्यान किया।
आराध्य देव आराधक हम, भावों से पूजा करते हैं।
राजा मेरू है कल्पवृक्ष, प्रभु दर्शन कर्म को हरते हैं।।

ॐ ह्रीं मेरूवृक्ष चतुर्दिशि चतुर्जिन मन्दिर प्रतिमाभ्यो जलं निर्वपामीति स्वाहा।

जीवन का बोझा ढोता हूँ, नीति रीति से दूर रहूँ।
चंदन ले चरणों को पूजूँ, शीतलता दो दुख नाही लहूँ।।
आराध्य देव...

ॐ ह्रीं मेरूवृक्ष चतुर्दिशि चतुर्जिन मन्दिर प्रतिमाभ्यश्चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

पीड़ित है सारी बसुन्धरा, स्थिरता मन में ना होती।
भावों का अक्षत हम लाये, यह बीज मुक्ति का बो देती।।
आराध्य देव...

ॐ ह्रीं मेरूवृक्ष चतुर्दिशि चतुर्जिन मन्दिर प्रतिमाभ्यः अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

रागों में लिपटा रहता हूँ, उसमें ही आनंद आया है।
सुंदर पुष्पों को हम लाये, विषयों ने ही भटकाया है।।
आराध्य देव आराधक हम, भावों से पूजा करते हैं।
राजा मेरू है कल्पवृक्ष, प्रभु दर्शन कर्म को हरते हैं।।
आराध्य देव...

ॐ ह्रीं मेरूवृक्ष चतुर्दिशि चतुर्जिन मन्दिर प्रतिमाभ्यः पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

सर्वोत्तम भूख ये मिट जाये, यह भूख तो कर्म कराती है।
नैवेद्य चरण में रखते हम, यह क्षुधा रोग नशवाती है।।
आराध्य देव...

ॐ ह्रीं मेरूवृक्ष चतुर्दिशि चतुर्जिन मन्दिर प्रतिमाभ्यो नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

ऋषियों ने आतम ध्यान किया, निज केवल ज्ञान जगाया है।
यह दीपक ज्ञान चढ़ाते हैं, तम हटा ज्ञान प्रगटाया है।।
आराध्य देव...

ॐ ह्रीं मेरूवृक्ष चतुर्दिशि चतुर्जिन मन्दिर प्रतिमाभ्यो दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

आठों कर्मों के सर्प डसें, कर्मों की मार भी सहता हूँ।
तप से कर्मों का धुआं उड़े अग्नि मैं धूप में खेता हूँ।।
आराध्य देव...

ॐ ह्रीं मेरूवृक्ष चतुर्दिशि चतुर्जिन मन्दिर प्रतिमाभ्यो धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

प्यासी हैं अखियां फल पायें, भक्तों की तुम आवाज सुनो।
तप के फल फूल चढ़ाते हैं, तुम भक्ति का ही साज सुनो।।
आराध्य देव...

ॐ ह्रीं मेरूवृक्ष चतुर्दिशि चतुर्जिन मन्दिर प्रतिमाभ्यः फलं निर्वपामीति स्वाहा।

मानव में चिंता भरी हुई, भक्ति को न मन शुद्ध हुआ।
अर्घ्यों का थाल सजा लाये, पाकर के हर्षित आज हुआ।।
आराध्य देव...

ॐ ह्रीं मेरूवृक्ष चतुर्दिशि चतुर्जिन मन्दिर प्रतिमाभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मंदार भूप कल्पवृक्ष स्थित जिनपूजा

स्थापना (त्रिभंगी छंद)

संतोष नहीं, सुख चैन नहीं नैतिकता मुझसे दूर रहे।
तप त्याग नहीं, वैराग्य नहीं, निज ध्यान जरा भी नाहिं रहे।।
भगवान चरण, शुभ समवशरण, हम भक्ति नित ही करते हैं।
तप त्याग वरण, सब कर्म हरण, पुण्यों से झोली भरते हैं।।

दोहा

कल्पवृक्ष मंदर है, जिन पर जिन का वास।
विश्व वैद्य जिनदेव से, है वरदान की आश।।

ॐ ह्रीं मन्दर भूपवृक्षस्य चतुर्दिशि चतुर्जिन प्रतिमाभ्यो अत्र अवतर अवतर संवौषद् आह्वाननं, अत्र तिष्ठ–तिष्ठ ठः ठः स्थापनं, अत्र मम सन्निहितो भव–भव वषद् सन्निधिकरणं।

त्रिभंगी

यह मोह का जाला, आतम काला, निशदिन करता रहता है।
आतम बिसराया, ज्ञान न आया, कर्मों का फल फलता है।।
मंदार में भगवन, ज्ञान का उपवन, दर्शन से आशीष मिले।
कल्पों की छाया, आनंद आया, आतम में शुभ ध्यान पले।।

ॐ ह्रीं मन्दार भूपवृक्षस्य चतुर्दिशि चतुर्जिन प्रतिमाभ्यो जलं निर्वपामीति स्वाहा।

रत्नत्रय चंदन, ध्यान से वंदन, चरणों में लेकर आया।
करूणा के सिंधु, हम हैं बिंदु, तुमको सागर सम पाया।।
मंदार में भगवन...

ॐ ह्रीं मन्दर भूपवृक्षस्य चतुर्दिशि चतुर्जिन प्रतिमाभ्यश्चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

तुम देव विलक्षण, हैं शुभ लक्षण, अक्षत से पूजा करते।
उल्लास हमारा, ध्यान तुम्हारा, संकट जीवों के हरते।।
मंदार में भगवन...

ॐ ह्रीं मन्दर भूपवृक्षस्य चतुर्दिशि चतुर्जिन प्रतिमाभ्यो अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

रागों की उलझन, तप से सुलझन, दर्शन से यह जान लिया।
पुष्पों की माला, लाया लाला, पूजा का सुख पाय लिया।।
मंदार में भगवन...

ॐ ह्रीं मन्दर भूपवृक्षस्य चतुर्दिशि चतुर्जिन प्रतिमाभ्यः पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

ये तन का भोजन, इन्द्रिय भोजन, तृप्ति न दे पाता है।
नैवेद्य चढ़ाऊँ, शरण में आऊँ, सुख शांति को पाता है।
मंदार में भगवन...

ॐ ह्रीं मन्दर भूपवृक्षस्य चतुर्दिशि चतुर्जिन प्रतिमाभ्यो नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जग–मग है ज्योति, ज्ञान का मोती, हृदय उजाला करता है।
दीपक की थाली, ज्योति वाली, यह अंधियारा हरता है।।
मंदार में भगवन...

ॐ ह्रीं मन्दर भूपवृक्षस्य चतुर्दिशि चतुर्जिन प्रतिमाभ्यो दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

कर्मों की लीला, ज्ञान रसीला, संकट सारे शीघ्र हरो।
यह धूप समर्पित, भाव है अर्पित, कर्मों का तुम ध्वंस करो।।
मंदार में भगवन...

ॐ ह्रीं मन्दर भूपवृक्षस्य चतुर्दिशि चतुर्जिन प्रतिमाभ्यो धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

फल फूल सुहाते, स्वयं ही खाते, हरदम जी ललचाता है।
पर कर्मों का फल, इसका न हल, आतम ना बच पाता है।।
मंदार में भगवन...

ॐ ह्रीं मन्दर भूपवृक्षस्य चतुर्दिशि चतुर्जिन प्रतिमाभ्यः फलं निर्वपामीति स्वाहा।

आनंद झरोखा, ज्ञान अनोखा, अमृत तुम बरसाते हो।
मैं अर्घ्य चढ़ाऊँ, ध्यान लगाऊँ मुक्ती पथ बतलाते हो।।
मंदार में भगवन...

ॐ ह्रीं मन्दर भूपवृक्षस्य चतुर्दिशि चतुर्जिन प्रतिमाभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

संतान भूप कल्पवृक्ष स्थित जिनपूजा (वायव्य दिशा)

स्थापना दोहा

जिनवर के दर्शन करें, समवशरण में जाये।
कल्पवृक्ष संतान है, शत शत शीश नवाये।।

ॐ ह्रीं सन्तान भूपवृक्षस्य चतुर्दिशायां जिन प्रतिमाभ्यः अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननं, अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं, अत्र मम सन्निहितौ भव – भव वषट् सन्निधिकरणं।

शेर चाल (हे दीन बंधू)

हे विश्वदेव विश्व वंद्य शरण आये हैं।
गुण गान करें, पूजा करें, नीर लाये हैं।।
ये कल्पवृक्ष प्राणियों को दान देते हैं।
संतान के जिन देव का भी दर्श लेते हैं।।

ॐ ह्रीं वायव्य दिशायां सन्तान भूपवृक्षस्थ जिन प्रतिमाभ्यो जलं निर्वपामीति स्वाहा।

संसार में ईर्ष्याग्नि से जलता रहा सदा।
ले चंदनादि भाव सहित पूजता मुदा।।
ये कल्पवृक्ष प्राणियों को दान देते हैं।
संतान के जिन देव का भी दर्श लेते हैं।

ॐ ह्रीं वायव्य दिशायां सन्तान भूपवृक्षस्थ जिन प्रतिमाभ्यः चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा।

सुनता रहा उपदेश किन्तु, ज्ञान न किया।
मैं अक्षत से पूजता हूं, हर्षमय जिया।।
ये कल्पवृक्ष प्राणियों....

ॐ ह्रीं वायव्य दिशायां सन्तान भूपवृक्षस्य जिन प्रतिमाभ्यः अक्षतं निर्व. स्वाहा।

रिश्तों की डोरियों में बंध राग मैं फंसा।
रोता हूं कर्म के उदय कर्मों की है सजा।।
ये कल्पवृक्ष प्राणियों...

ॐ ह्रीं वायव्य दिशायां सन्तान भूपवृक्षस्य जिन प्रतिमाभ्यः पुष्पं निर्व. स्वाहा।

खाता रहा पीता रहा, पर अंत न पाया।
हो करके दुखी हे, प्रभो मैं पूजने आया।
ये कल्पवृक्ष प्राणियों...

ॐ ह्रीं वायव्य दिशायां सन्तान भूपवृक्षस्थ जिन प्रतिमाभ्यो नैवेद्यं निर्व. स्वाहा।

न ज्ञान का दीपक जला, अंधेरे में भटका।
मोही बना पिटता रहा, मैं मोह में अटका।।
ये कल्पवृक्ष प्राणियों...

ॐ ह्रीं वायव्य दिशायां सन्तान भूपवृक्षस्थ जिन प्रतिमाभ्यो दीपं निर्व. स्वाहा।

कर्मों की श्रृंखला पड़ी है पांव में मेरे।
मैं धूम चढ़ा अर्ज करूँ, चरण में तेरे।।
ये कल्पवृक्ष प्राणियों...

ॐ ह्रीं वायव्य दिशायां सन्तान भूपवृक्षस्थ जिन प्रतिमाभ्यो धूपं निर्व. स्वाहा।

अच्छा किये अच्छा मिले, ऐसा ही है होता।
पूरव में किए कर्म के, फल आज भी पाता।।
ये कल्पवृक्ष प्राणियों...

ॐ ह्रीं वायव्य दिशायां सन्तान भूपवृक्षस्थ जिन प्रतिमाभ्यः फलं निर्व. स्वाहा।

चरणों का मिले आसरा, मैं ध्यान लगाऊँ।
पा मुक्ति का ये रास्ता मैं अर्घ्य चढ़ाऊँ।।
ये कल्पवृक्ष प्राणियों को दान देते हैं।
संतान के जिन देव का भी दर्श लेते हैं।

ॐ ह्रीं वायव्य दिशायां सन्तान भूपवृक्षस्थ जिन प्रतिमाभ्यो अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

इत्याशीर्वादः पुष्पांजलिं क्षिपेत्

पारिजात भूप कल्पवृक्ष स्थित जिनपूजन

(ईशान दिशा)

स्थापना

कल्पवृक्ष की भूमि में, भूप वृक्ष परमान।
पारिजात शुभ नाम है, विदिशा में ईशान।।

ॐ ह्रीं चतुर्दिशिपारिजात भूपवृक्षस्य श्री जिन प्रतिमाभ्यः अत्र अवतर अवतर संवौषद् आह्वाननं, अत्र तिष्ठ–तिष्ठ ठः ठः स्थापनं, अत्र मम सन्निहितौ भव–भव वषट् सन्निधिकरणं।

गीता छंद

अज्ञान मल यह दूर होवे, ज्ञान जल को ले लिया।
निज आत्म गंगा जल नहाये, भाव शुभ यह कर लिया।।
पारिजात के वृक्ष सुंदर, जिन वहां पर दर्श दें।
जिनवर महल जा पूजते, आतम यहां पर हर्ष लें।।

ॐ ह्रीं ईशान दिशि पारिजात भूप वृक्षस्थ जिन प्रतिमाभ्यो जलं निर्वपामीति स्वाहा।

सब पाप शीतल ही बने, निज आत्म दर्शन को करूँ।
तेरे चरण को पूजकर, निज आत्म सिद्धि को वरूँ।।
पारिजात के वृक्ष सुंदर...

ॐ ह्रीं ईशान दिशि पारिजात भूप वृक्षस्थ जिन प्रतिमाभ्यश्चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

चन्द्र सम उज्ज्वल अखंडित, अक्षतों का थाल है।
निज आत्मा उज्ज्वल बने, यह पाप का जंजाल है।।
पारिजात के वृक्ष सुंदर...

ॐ ह्रीं ईशान दिशि पारिजात भूप वृक्षस्थ जिन प्रतिमाभ्यो अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

चारों गति में वासना का, जाल है फैला हुआ।
ये ही जीवो को घुमाये, आत्म धन को ना छुआ।।

यह पारिजात का वृक्ष सुंदर, जिन वहां पर दर्श दें।
जिनवर महल जा पूजते, आतम यहां पर हर्ष ले।।

ॐ ह्रीं ईशान दिशि पारिजात भूप वृक्षस्थ जिन प्रतिमाभ्यः पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

भोज्य यह न पेट भरता, किन्तु मन ही शान्त हो।
तन मन की प्रभुवर भूख मेटो, आतम प्रभा प्रशांत हो।।
यह पारिजात के वृक्ष सुंदर, जिन वहां पर दर्श दें।
जिनवर महल जा पूजते, आतम यहां पर हर्ष ले।।

ॐ ह्रीं ईशान दिशि पारिजात भूप वृक्षस्थ जिन प्रतिमाभ्यो नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जब ज्ञान न हो अंध बनते, कर्म गति में जा फिरे।
जग मग जगे जब ज्ञान दीपक, तो जगत का तम हरे।।
पारिजात के वृक्ष सुंदर...

ॐ ह्रीं ईशान दिशि पारिजात भूप वृक्षस्थ जिन प्रतिमाभ्यो दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

दृष्टी नहीं अध्यात्म में, अभिमान से झुकता नहीं।
परद्रव्य में ही रत रहा, निज में कभी टिकता नहीं।।
पारिजात के वृक्ष सुंदर...

ॐ ह्रीं ईशान दिशि पारिजात भूप वृक्षस्थ जिन प्रतिमाभ्यो धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

कल्पना में मोक्ष चाहूँ, पर नहीं चारित्र है।
शुभ कार्य ही शुभ फल को देते, धर्म सबका मित्र है।।
पारिजात के वृक्ष सुंदर...

ॐ ह्रीं ईशान दिशि पारिजात भूप वृक्षस्थ जिन प्रतिमाभ्यः फलं निर्वपामीति स्वाहा।

सर्वोपरि है सिद्ध पदवी, जिनकी हम पूजा करें।
और अर्घ्य चरणों में चढ़ाऊँ, कर्म सारे परिहरें।।
पारिजात के वृक्ष सुंदर...

ॐ ह्रीं ईशान दिशि पारिजात भूप वृक्षस्थ जिन प्रतिमाभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

समुच्चय जयमाला

(अथ चारों भूप वृक्ष संबंधी)

दोहा

छटवी भूमि वृक्ष की, सुंदरता गुणखान।
मन वच काया से सुनो, बारंबार प्रणाम।।

पछरि छंद

जय मेरूवृक्ष उत्तर सुजान, वृक्षों में राजा के समान।
शीतलमयी तरूवर की छाया, मेरू वृक्षों की शुभ माया।।
चारों दिश में हैं चार मान, जिनवर बैठे जिन पर महान।
जय गंध कुटी शुभ गंध देय, जग मग जोति जग को हरेय।।
रत्नों मय सिंहासन प्यारा, प्रभु रूप दिव्य शोभे न्यारा।
वृक्षों ने छाया फैलाई, भक्तों ने छाया है पाई।।
जय चमर ढुरे आनंद देय, उज्ज्वल कांति मनको हरेय।
अठ प्रातिहार्य शोभा बढ़ाये, चरणों में आकर सिर नवाये।।
देवों ने प्रभु गुणगान किया, जिनवर का शुभ सम्मान किया।
पूजा भक्ति में ताल देय, सब हरष–हरष ता थेई करेय।।
इक भूप वृक्ष इक दिशा होय, चारों दिश में जिन दर्श होय।
जिन मंदिर सोलह दर्श जायें, पापों के मेघों को हटायें।।
दर्शन से तत्क्षण पाप नष्ट, मिट जाये सारे दुःख कष्ट।
चारों गतियों में घूम रहे, मोही बनकर के झूम रहे।।
आठों कर्मों ने लिया घेर, आठों कर्मों ने किया ढेर।
कर्मों की लीला न्यारी है, कर्मों की ही तैयारी है।।
ये कर्म–कर्म बुलवाते हैं, जीवों को नाच नचाते हैं।
तुमने कर्मों को छोड़ा है, कर्मों से नाता तोड़ा है।।
संकल्प हमें भी लेना है, तप में ही ध्यान को देना है।
तप अग्नि में ही कर्म जरे, तप कर्मों के ही मेघ हरे।।
तप द्वारा तुमको पाना है, चरणों में तेरे आना है।
'स्वस्ति' गुणगान को गाती है, चरणों में शीश झुकाती है।।

दोहा

समवशरण का दर्श हो, तीर्थंकर भगवान।
कर्म बंध से छूटकर, पहुँचूँ शिवपुर धाम।।

ॐ ह्रीं चतुर्दिशि पारिजात भूप वृक्षस्थ जिनेन्द्राय पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

प्रीति चरणों से करूँ, चरण नहीं शिवधाम।
चरण शरण को पाये कर, बारंबार प्रणाम।।

।।इत्याशीर्वादः पुष्पांजलिं क्षिपेत्।।

सप्तम भवन भूमि अर्घ्यावली

शंभू छंद

सप्तम भूमी स्तूप बने, रत्नों मय राशि शोभित हैं।
शुभ समवशरण सुंदर रचना, लख भविजन होते मोहित हैं।।
शुभ द्वार सु सुंदर चौथी वेदी, समवशरण में साज रही।
कंगूरा लटके घंटी बाजे, उपमा अद्भुत राज रही।।

ॐ ह्रीं सप्तमभूमि गल्यास्तूप काम दक्षिणभागे अन्तर गल्याः द्वारे आभ्यन्तश्चतुर्थ वेदिका संयुक्त समवशरण स्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं ।1।

चौपाई

वेदी में चित्रों की रचना, पाप करम से ही है बचना।
चित्र यहां पर ज्ञान सिखाये, दर्शन कर सबहि मुस्काये।।

ॐ ह्रीं विविधचित्रयुक्तचतुर्थवेदिका संयुक्त समवशरण स्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं ।2।

मुनिवर ध्यान लगाकर ठाड़े, वर्षा गर्मी या हो जाड़े।
पर्वत पर जा ध्यान लगाया, ऐसे चित्र ने ज्ञान सिखाया।।

ॐ ह्रीं सप्तमभूमौ चतुर्थवेदिका चतुर्थशालमध्ये धर्मोपदेशकयति चित्रसंयुक्त समवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं ।3।

चलते हुए भूमि वे देखें, चलते–चलते आतम लेखें।
आतम से आतम में रहते, आतम में रह परिषह सहते।।

ॐ ह्रीं सप्तमभूमौ चतुर्थवेदिका चतुर्थशालमध्ये आत्मलीन दिगम्बरयतिसंयुक्त समवशरण स्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं ।4।

लौकान्तिक वैराग्य बढ़ाये, ऐसे सुंदर चित्र दिखाये।
नभ में मेघ घटा उठ आई, दिव्य दिवाकर छिपता भाई।।

ॐ ह्रीं सप्तमभूमौ नानाविधिचित्रचित्रितचतुर्थवेदिकासंयुक्त समवशरण स्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं ।5।

जो सूरज आकाश में चमके, धरती पर उजियारा दमके।
सप्त रंग का धनुष बना है, मानों सुन्दर धनुष तना है।।

ॐ ह्रीं सप्तमभूमौ चतुर्थशालचतुर्भागस्वेतवर्णचतुर्थवेदिका संयुक्त समवशरण स्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं ।6।

मेघ ही नभ में काले–काले, बिजली चमके हो उजियाले।
चित्र प्रकृति के रंग दिखाये, इन सबमें वैराग्य बढ़ाये।।

ॐ ह्रीं सप्तमभूमौ द्वाविंशतिभागवलयव्याससंयुक्त समवशरण स्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं ।7।

चौथा कोट श्वेत रंग भायो, चौथी वेदी को दर्शायो।
हीरा जिन मंदिर चमकाये, इन्द्र महल आकर बनवाये।।

ॐ ह्रीं सप्तमभूमौ विविधरचनायुक्त जिनमन्दिरसंयुक्त समवशरण स्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं ।8।

पंक्ति में सब मन्दिर सोहे, वलय व्यास बाईस भी मोहे।
स्वर्ण खंभ हीरे के जड़े, मंदिर के आगे हैं खड़े।।

ॐ ह्रीं एवम्बिधानेकरचनासंयुक्त समवशरण स्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं ।9।

बैठक में भक्तों का मेला, देव देवियां करती रेला।
परदा मोती झालर शोभे, विद्याधर सबका मन मोहे।।

ॐ ह्रीं सप्तमभूमौ मन्दिर मध्यचतुष्कोपरिमण्डपसंयुक्त समवशरण स्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं ।10।

ऊंचे–ऊंचे शिखर सुहाने, कलशा सुंदर लगे चढ़ाने।
उस पर ध्वजा लहर लहराये, मानो भव्य को पास बुलाये।।

ॐ ह्रीं सप्तमभूमौ मध्यचतुष्कोपरि मण्डपसंयुक्त समवशरण स्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं ।11।

मंदिर बहुत भक्त बहु आवे, प्रभु में अपनी भक्ति दिखावे।
बीन बजा सुरताल मिलावे, ले मृदंग ऊंचे स्वर गावे।।

ॐ ह्रीं सप्तमभूमौ मध्यचतुष्कोपरि मण्डपसंयुक्त समवशरण स्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं ।12।

नृत्य करे जिनवर के आगे, पाप वहां से शीघ्र ही भागे।
महिमा भगवन सुर नर गावे, तो भी न पूरी हो पावे।।

ॐ ह्रीं सप्तमभूमौ श्री मण्डपसंयुक्त समवशरण स्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं ।13।

दोहा

मंदर मध्य में देखिये, चौंक है कुरसीदार।
रत्न जड़ित सोपान है, होवे नित्य बहार।।

ॐ ह्रीं सप्तमभूमौ श्रीमण्डपे केवलिजिनसंयुक्त समवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं ।14।

एक सहस खम्बें बने, ऊपर चौंक प्रमाण।
मंडप सुंदर साजता, बारंबार प्रणाम।।

ॐ ह्रीं सप्तमभूमौ श्रीमण्डपे श्रुतकेवलिसंयुक्त समवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं ।15।

द्वार जहां तोरण बने, सुंदर रत्नों माल।
झक झक ज्योति होत है, पुष्प बनेगा लाल।।

ॐ ह्रीं सप्तमभूमौ युक्तविविधरचनासंयुक्त समवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं ।17।

श्री मण्डप श्रुत केवली, देते ज्ञान महान।
ज्ञान दीप जलता वहीं, बारम्बार प्रणाम।।
जिनवाणी की वाणी को, जन जन देय सुनाय।
श्री मंडप शुभ भूमि है, 'स्वस्ति' भव्य ही आय।।
जितना हमको ज्ञान था, उतने लेख लिखाये।
वचन न पूरण कह सके, प्रभुवर गुण प्रगटाये।।

ॐ ह्रीं संयुक्त समवशरणस्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं ।20।

अथ केवल ज्ञान पूजा

स्थापना (शंभू छंद)

चार घातिया घात के स्वामी, केवलज्ञान को पाया है।
सप्तम भूमि में आन विराजे, आतम आनंद छाया है।।
सुन नर मिल सब पूजा करते, मुझको भी ज्ञान का दान मिले।
केवलज्ञानी मैं बन जाऊँ, आतम आनंद का फूल खिले।।

ॐ ह्रीं केवलज्ञान संयुक्तजिनेन्द्र अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननं, अत्र तिष्ठ–तिष्ठ ठः ठः स्थापनं, अत्र मम सन्निहितो भव–भव वषट् सन्निधिकरणं।

छंद जोगी रासा

मम ज्ञान पे परदा डाले करम, सच्चा मुझको न ज्ञान हुआ।
अच्छी बातों को भूल जायें, निर्मल होने जल लाये कुआं।।
केवलज्ञानी केवल धारक, केवल पाने पूजा करते।
शुभ समवशरण में आकर के, चरणों में मस्तक हम धरते।।

ॐ ह्रीं समवशरणस्थ केवलि जिनप्रतिमाभ्यो जलं निर्वपामीति स्वाहा।

चक्षु से आतम न दिखता, आतम दर्शन हो ध्यानी को।
शुद्धोपयोग में लीन होय, शीतल आनंद हो ज्ञानी को।।
केवलज्ञानी केवल धारक...

ॐ ह्रीं समवशरणस्थ केवलि जिनप्रतिमाभ्यः चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

कर्मों का फल सुख दुख होता, सुख दुख में हंसते रोते हैं।
पुरुषार्थ करें जिन भक्ति का, अक्षय आतम को पाते हैं।।
केवलज्ञानी केवल धारक...

ॐ ह्रीं समवशरणस्थ केवलि जिनप्रतिमाभ्यो अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

हर वस्तु से जग मोह करे, मोही माया का जाल कसे।
कर्मों के राजा बन बैठे, पुष्पों सम रोते और हंसे।
केवलज्ञानी केवल धारक...

ॐ ह्रीं समवशरणस्थ केवलि जिनप्रतिमाभ्यः पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

चारों गतियों में बंधन है, यह आयु कर्म का खेल कहा।
हर गति में बस भोजन कीना, सम्यक् पुरुषारथ नहीं गहा।।
केवलज्ञानी केवल धारक...

ॐ ह्रीं समवशरणस्थ केवलि जिनप्रतिमाभ्यो नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

तन चित्र विचित्र बने नूतन, मर मर के तन को धरते हैं।
बाहर देखे अंदर तम है, दीपक से पूजा करते हैं।।
केवलज्ञानी केवल धारक...

ॐ ह्रीं समवशरणस्थ केवलि जिनप्रतिमाभ्यो दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

ऊंचा नीचा है कर्म करें, ऊंचा बन नीचा काम किया।
कर्मों का धुआं उड़ाने को प्रभुवर तेरा ही नाम लिया।।
केवलज्ञानी केवल धारक...

ॐ ह्रीं समवशरणस्थ केवलि जिनप्रतिमाभ्यो धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

दूजे को अगर सुखी देखूँ, ईर्ष्या में मन जलता रहता।
कर्मों के फल को ना जाने, जग के दुख को सहता रहता।।
केवलज्ञानी केवल धारक...

ॐ ह्रीं समवशरणस्थ केवलि जिनप्रतिमाभ्यः फलं निर्वपामीति स्वाहा।

विघ्नों ने कार्य बिगाड़ा है, यह अंतराय निज शत्रु बना।
अर्घ्यों का थाल चढ़ाऊं मैं, छाया कर्मों का मेघ घना।।
केवलज्ञानी केवल धारक...

ॐ ह्रीं समवशरणस्थ केवलि जिनप्रतिमाभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाला

जय पाने जय बोलते, जयमाला, गुणखान।
केवल ज्ञान ही जय करें, शत शत बार प्रणाम।।

पद्धरि छंद

हे परम ज्ञान हे परम ध्यान, हे परम पिता तुमको प्रणाम।
तुम विश्व वंद्य तुम विश्व जीत, प्रभुवर तुम सबके हुये मीत।।
घर वैभव तज तुम जोग धरा, आतम में आनंद ज्ञान भरा।
तुम मात–पिता का मोह तजा, आतम से आतम राम भजा।।

वस्त्राभूषण जग को दीना, गुण आभूषण धारण कीना।
हिंसा त्यागी तप को धारा, कर्मों का राजा भी हारा।।
तुम क्रोध से नाता तोड़ा है, तुम क्षमा भाव को जोड़ा है।
माया की छाया दूर रहे, बाहर जाकर के कपट सहे।।
संयम के फूल खिलाये हैं, गुण चिंतन जब प्रगटाये हैं।
यह धर्म अहिंसा प्यारा है, सबको दीना यह नारा है।।
तप सत्य मयी तुम वाणी है, जग जीवों की कल्याणी है।
ग्रह भी विग्रह को न करते, चरणों में आकर के झुकते।।
तीर्थंकर के ही पास रहे, प्रभु के अतिशय दिन–रात बहे।
रचना कुबेर ही करता है, शुभ समवशरण को भरता है।।
हीरा–मोती पन्ना मुक्ता, हे सर्वश्रेष्ठ वे ही वक्ता।
स्फटिक मणी दीवार बनी, देवों की आई भीड़ घनी।।
द्वारे पर मानस्तम्भ बना, मानी जन का सब मान गला।
सीढ़ी पर अतिशय होता है, पग धरते दर्शन होता है।।
रोगी रोगों को खोता है, पुण्यों का नर्तन होता है।
केवलज्ञानी अतिशय कारी, यह ज्ञान की महिमा है न्यारी।।
दर्पणवत् ज्ञान में दिखता है, आतम का स्वाद भी चखता है।
भगवन मेरी विनती सुनना, 'स्वस्ति' के मन हर क्षण रहना।।

दोहा

निर्मोही जिन देव तुम, मोहे हैं जग जीव।
चरण शरण जब भी मिले, सम्यग्दर्शन नीव।।

ॐ ह्रीं सप्तम भूमौ केवलज्ञान जिनेन्द्राय जयमाला पूर्णार्घं निर्व. स्वाहा।

दोहा

दर्पणवत् शुभ ज्ञान है, राग रहे न द्वेष।
वीतरागता के धनी, वीतरागता वेश।।

।।इत्याशीर्वाद : पुष्पांजलिं क्षिपेत्।।

नवस्तूप स्थित जिन पूजा (पूर्व दिशा)

स्थापना

गीता छंद

प्राची दिशा में लालिमा, जग को अजब संदेश दे,
जागो उठो हे भोले प्राणी, यह नया उपदेश दे।
पूरब दिशा स्तूप नव हैं, जिनप्रभु जी राजते,
हो सौख्य धन शांति सभी को, कर्म सब ही भाजते।।

ॐ ह्रीं पूर्व दिक् नवस्तूपस्थ श्री जिन प्रतिमा। अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननं, अत्र तिष्ठ–तिष्ठ ठः ठः स्थापनं, अत्र मम सन्निहितो भव–भव वषट् सन्निधिकरणं।

चौपाई

जल ने मल को दूर हटाया, ज्ञान ने जल का कार्य निभाया।
कर्म मैल मेरा धुल जावे, नवस्तूप की पूजा गावे।।

ॐ ह्रीं पूर्व दिक् नवस्तूप जिनप्रतिमाभ्यो जलं निर्वपामीति स्वाहा।

चंदन चंदा सम शीतल है, कर्म ताप सम जीवन हल है।
चंदन सम शीतलता पावे, नवस्तूप की पूजा गावे।।

ॐ ह्रीं पूर्व दिक् नवस्तूप चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा।

उज्ज्वल अक्षत कर में लाया, अक्षत सम तुमको है पाया।
अक्षय पद पाने को आवे, नवस्तूप की पूजा गावे।।

ॐ ह्रीं पूर्व दिक् नवस्तूप जिनप्रतिमाभ्यो अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

पुष्पों ने जग जीव लुभाया, काम बाण में उन्हें फंसाया।
शुद्ध भाव मेरा हो जावे, नवस्तूप की पूजा गावे।।

ॐ ह्रीं पूर्व दिक् नवस्तूप जिनप्रतिमाभ्यः पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

पेट भरा खाली हो जावे, बार–बार भोजन को खावे।
क्षुधा रोग को शीघ्र मिटावे, नवस्तूप की पूजा गावे।।

ॐ ह्रीं पूर्व दिक् नवस्तूप जिनप्रतिमाभ्यो नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मोह अंध कुछ न सच दीखा, सम्यग्ज्ञान न लागे नीका।
आतम में उजियाला होवे, नवस्तूप की पूजा गावे।।

ॐ ह्रीं पूर्व दिक् नवस्तूप जिनप्रतिमाभ्यो दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

आठो कर्म महादुख दायी, कर्मों के मारे सब भाई।
कर्मों के पर्वत को तोड़ो, नवस्तूप से नाता जोड़ो।।

ॐ ह्रीं पूर्व दिक् नवस्तूप जिनप्रतिमाभ्यो धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

आतम ज्ञानी आनंद पावे, आतम के फल मिष्ट ही भावे।
आतम में आतम खो जाये, नवस्तूप की पूज कराये।।

ॐ ह्रीं पूर्व दिक् नवस्तूप जिनप्रतिमाभ्यः फलं निर्वपामीति स्वाहा।

द्रव्यों की थाली भर लाया, शुभ भावों से तुम्हें चढ़ाया।
शिव सुख वासी तेरा धाम, नवस्तूप को करें प्रणाम।।

ॐ ह्रीं पूर्व दिक् नवस्तूप जिनप्रतिमाभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

नवस्तूप स्थित जिन पूजा (दक्षिण दिशा)

स्थापना
गीता छंद

निज आत्मा में लीन हो, जिन ज्ञान धन को पा लिया।
आराधना हम सब करें, आनंद अनुभव आ लिया।।
दक्षिण दिशा स्तूप नव हैं, जिन प्रभु जी राजते।
हो सौख्य धन शांति सभी को, कर्म सब ही भाजते।।

ॐ ह्रीं दक्षिण दिक् नवस्तूप श्री जिन प्रतिमा अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननं, अत्र तिष्ठ–तिष्ठ ठः ठः स्थापनं, अत्र मम सन्निहितो भव–भव वषट् सन्निधिकरणं।

दोहा

जल मन को धोवे सदा, जल सम हो मम भाव।
नवस्तूप को पूजते, पार लगेगी नाव।।

ॐ ह्रीं दक्षिण दिक् नवस्तूप जिनप्रतिमाभ्यो जलं निर्वपामीति स्वाहा।

चंदन से वंदन करें, शीतल भाव बनाये।
नवस्तूप को पूजने, चरणों में हम आये।।

ॐ ह्रीं दक्षिण दिक् नवस्तूप जिनप्रतिमाभ्यो चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

क्षत विक्षत होता रहा, अक्षय का दो दान।
नवस्तूप को पूजते, बारम्बार प्रणाम।।

ॐ ह्रीं दक्षिण दिक् नवस्तूप जिनप्रतिमाभ्यो अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

जीव पुष्प को चाहते, पर यह तो मुरझाये।
संयम बगिया खिल उठे, चरणों शीश झुकाये।।

ॐ ह्रीं दक्षिण दिक् नवस्तूप जिनप्रतिमाभ्यः पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

भूख लगी भोजन किया, नहीं किया निज पान।
नैवेद्यो से पूजते, कर स्तूप का ध्यान।।

ॐ ह्रीं दक्षिण दिक् नवस्तूप जिनप्रतिमाभ्यो नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

ज्योति सदा जलती रहे, फैले प्रभा चहुँ ओर।
दीप चरण में भेंटता, होगा ज्ञान का भोर।।

ॐ ह्रीं दक्षिण दिक् नवस्तूप जिनप्रतिमाभ्यो दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

आठों कर्म का ठाठ है, धर्म हुआ मम दूर।
अष्ट कर्म के नाशने, ज्ञान होय भरपूर।।

ॐ ह्रीं दक्षिण दिक् नवस्तूप जिनप्रतिमाभ्यो धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

फल से फल की चाह है, मुक्ति फल मिल जाये।
नवस्तूप को पूजते, शत–शत शीश झुकाये।।

ॐ ह्रीं दक्षिण दिक् नवस्तूप जिनप्रतिमाभ्यः फलं निर्वपामीति स्वाहा।

पद अनर्घ्य है सुख भरा, जग है दुख भंडार।
नवस्तूप को पूजते, मिले प्रभु का प्यार।।

ॐ ह्रीं दक्षिण दिक् नवस्तूप जिनप्रतिमाभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

नवस्तूप स्थित जिन पूजा (पश्चिम दिशा)

स्थापना
गीता छंद

मम साधना आराधना, प्रभु भक्ति है तेरे लिये।
तेरे चरण ही पूजना, बस श्रद्धा है तेरे लिये।।
पश्चिम दिशा स्तूप नव है, जिन प्रभु जी राजते।
हो सौख्य धन शांति सभी को, कर्म सब ही भाजते।।

ॐ ह्रीं पश्चिम दिक् नवस्तूप जिन प्रतिमा अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननं, अत्र तिष्ठ–तिष्ठ ठः ठः स्थापनं, अत्र मम सन्निहितो भव–भव वषट् सन्निधिकरणं।

शंभू छंद

भावों की निर्मलता प्रभुवर, गंगा से भी निर्मल होती।
जल चरणों में अर्पित करते, मन के भावों को धो देती।।

ॐ ह्रीं पश्चिम दिक् नवस्तूप जिनप्रतिमाभ्यो जलं निर्वपामीति स्वाहा।

ईर्ष्या की अग्नि दाह करे, मन कल–कल बेकल होता है।
अर्पित है चरणों में चंदन, जो बीज शांति का बोता है।।

ॐ ह्रीं पश्चिम दिक् नवस्तूप जिनप्रतिमाभ्यः चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

अक्षय पद पाने को प्रभवुर, अक्षत की थाली लाया हूँ।
अक्षयपुर वासी बन जाऊँ, भावों का पुंज बनाया हूँ।।

ॐ ह्रीं पश्चिम दिक् नवस्तूप जिनप्रतिमाभ्यो अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

संयम बगिया से ज्ञान पुष्प चुनकर के चरणों में लाया।
रागों के कांटे दूर हटे, शुभ भावों से मैं भर आया।

ॐ ह्रीं पश्चिम दिक् नवस्तूप जिनप्रतिमाभ्यः पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

देवों ने अमृत पान किया, फिर भी यह क्षुधा सताती है।
नैवेद्य समर्पित करते हैं, तो आतम शुद्धि लाती है।।

ॐ ह्रीं पश्चिम दिक् नवस्तूप जिनप्रतिमाभ्यो नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

है जनम–जनम का नाता प्रभु, अंधे को राह दिखा देना।
अर्पित करने दीपक लाया, मुक्ती का मार्ग बता देना।

ॐ ह्रीं पश्चिम दिक् नवस्तूप जिनप्रतिमाभ्यो दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

कर्मों का कैदी बना हुआ, चारों गतियों में घूम रहा।
कर्मों का धुआं उड़ाने को, मैं चरण तुम्हारे चूम रहा।।

ॐ ह्रीं पश्चिम दिक् नवस्तूप जिनप्रतिमाभ्यो धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्पण सब कुछ है कर दीना, फल और नहीं मैं कुछ चाहूँ।
मुक्ती में जाकर वास करूँ, इक यही भवना मैं भाऊँ।।

ॐ ह्रीं पश्चिम दिक् नवस्तूप जिनप्रतिमाभ्यः फलं निर्वपामीति स्वाहा।

मैं क्या मांगू प्रभुवर तुमसे, बस रोम–रोम में बस जाओ।
अर्घ्यों की थाली लाया हूँ, हृदय में आन समा जाओ।।

ॐ ह्रीं पश्चिम दिक् नवस्तूप जिनप्रतिमाभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

नवस्तूप स्थित जिन पूजा (उत्तर दिशा)

स्थापना

गीता छंद

निज आत्मा में लीन हो, जिन ज्ञान धन को पा लिया।
आराधना हम सब करें, आनंद अनुभव आ लिया।।
उत्तर दिशा स्तूप नव हैं, जिन प्रभु जी राजते।
हो सौख्य धन शांति सभी को, कर्म सब ही भाजते।।

ॐ ह्रीं उत्तर दिक् नवस्तूप जिन प्रतिमा अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननं, अत्र तिष्ठ–तिष्ठ ठः ठः स्थापनं, अत्र मम सन्निहितो भव–भव वषट् सन्निधिकरणं।

तर्ज : चौबीसी पूजा

अंधियारा मोह घना, सत्य न दिख पाया।
जल से मल धोवन हार, मन यह हर्षाया।।

ॐ ह्रीं उत्तर दिक् नवस्तूप जिनप्रतिमाभ्यो जलं निर्वपामीति स्वाहा।

चंदन है प्रभु का ज्ञान, शीतलता देवे।
आतम शीतल हो जाये, आतप मिट जावे।।

ॐ ह्रीं उत्तर दिक् नवस्तूप जिनप्रतिमाभ्यः चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

मिथ्या है जग के कार्य, मंगल आप करें।
अक्षय पद धारी नाथ, सारे कर्म हरें।।

ॐ ह्रीं उत्तर दिक् नवस्तूप जिनप्रतिमाभ्यो अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

श्रुत धारा का जिन ज्ञान, भाव स्वभाव करे।
यह पुष्प चढ़ाऊँ नाथ, सर्व विभाव हरे।।

ॐ ह्रीं उत्तर दिक् नवस्तूप जिनप्रतिमाभ्यः पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

चुन–चुन नैवेद्य बनाये, चरणों में लाऊँ।
मम क्षुधा रोग नश जाये, निज मस्तक नाऊँ।।

ॐ ह्रीं उत्तर दिक् नवस्तूप जिनप्रतिमाभ्यो नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

तमहर रवि देय प्रकाश, तम को दूर करे।
दीपक ले करता आश, सब अज्ञान हरे।।

ॐ ह्रीं उत्तर दिक् नवस्तूप जिनप्रतिमाभ्यो दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

आकुल व्याकुल जग जीव, कर्म सतावत हैं।
कर्मों की धूम उड़ाये पथ दर्शावत हैं।।

ॐ ह्रीं उत्तर दिक् नवस्तूप जिनप्रतिमाभ्यो धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

निष्काम कल्पतरू आप, फल ही फल देते।
फल लाया हूँ मैं साथ, मुक्ति में रहते।।

ॐ ह्रीं उत्तर दिक् नवस्तूप जिनप्रतिमाभ्यः फलं निर्वपामीति स्वाहा।

दोषों से रहित जिनेश, दोष रहित कर दो।
मैं अर्घ्य चढ़ाऊँ नाथ, झोली को भर दो।।

ॐ ह्रीं उत्तर दिक् नवस्तूप जिनप्रतिमाभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

समुच्चय जयमाला

(चतुर्दिक् नवस्तूप संबंधी)

दोहा

छत्तीसों स्तूप में, जिनवर देव महान।
गली सातवीं है कही, बारम्बार प्रणाम।।

शेर चाल (दे दी हमें आजादी...)

स्वीकार हो जिनदेव तुम्हें मेरा नमस्कार।
आराधना औ साधना के देव नमस्कार।।
सीता सती सोमा सती तारा को नमस्कार।
अर्पित करूँ श्रद्धा के सुमन तुम्हें नमस्कार।।1।।
छत्तीस हैं चारों दिशा में शोभते रहें।
भक्तों के आत्मज्ञान को भी मोहते रहें।।
जिनदेव का जब दर्श हो सम्यक भी दर्श हो।
जाते ही समवशरण में निज आत्म हर्ष हो।।2।।
है पूर्व दिशा ही सहस स्तूप धारती।
द्वारे में दे के दर्श वो भक्तों को तारती।।

जय पीठ तीन रत्न औ मणियों के हैं बने।
देते प्रकाश देते ज्ञान पुंज हैं घने।।3।।
जिनदेव तन से ऊंचा, स्तूप है महान।
ऊंचा शिखर ध्वजा लगी, शत् बार है प्रणाम।।
जय मोतियों की झालरों से शोभा है बढ़ी।
तोरण चढ़े घंटा लगे, हो घंटे की ध्वनि।।4।।
मंगल वसु है द्रव्य शुद्ध ध्यान से लखे।
कांति बढ़े शांति बढ़े जो ध्यान को चखे।।
अरिहंत कर्म घात के अरिहंत हैं हुये।
पाई है दिव्य ज्योति, वे कृतकृत्य हैं हुये।।5।।
सब देव देवियां अपार द्रव्य लाय के।
भक्ति में झूमती हैं, शुद्ध भाव भाय के।।
मेरा जनम सुफल हुआ दर्शन हुआ जिनदेव।
जब तक न मिले मोक्ष मुझे मैं करूँगा सेव।।
चिंतामणी हो कल्पतरू आशा पूरी हो।
चारित्र रत्न पाऊँ साधना भी पूरी हो।।
तुम चन्द्र हो तुम सूर्य हो पावन हो तुम प्रभो।
निष्काम हो निर्वेद हो सावन हो तुम प्रभो।।7।।
भगवान मेरी आत्मा को आके बचाओ।
ये डूबती है नाव इसे पार लगाओ।।
हम आश ले के द्वार तेरे आये हैं प्रभो।
'स्वस्ति' निजात्म ज्ञान हो ये भाव हैं विभो।।8।।

दोहा

प्रबल भावना है मेरी, दर्शन हो जिनदेव।
समवशरण में जायके, करूं आपकी सेवा।।

ॐ ह्रीं चतुर्दिक्षु सम्बन्धीषट् त्रिंशत्स्तूपस्थ जिनेन्द्रेभ्यो पूर्णार्घं निर्वपामीति स्वाहा।

दोहा

उज्ज्वल आतम को किया, तीर्थंकर भगवान।
आकर हम पूजा करें, शत–शत बार प्रणाम।
।।इत्याशीर्वादः पुष्पांजलिं क्षिपेत्।।

अष्टम् श्री मंडप भूमि स्थित जिन पूजन

स्थापना (शंभू छंद)

सम भाव भावना का अवसर, हर प्राणी को मिल जाता है।
वह धन कुबेर रचना करके, सुंदरता बहुत बढ़ाता है।
अष्टम भूमि श्री मंडप है, जिसमें जिनवर जी राज रहे।
आव्हानन करते हम उनका, जो समवशरण में साज रहे।

ॐ ह्रीं समवशरणस्थ चतुर्विंशति जिनेन्द्र अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननं, अत्र तिष्ठ–तिष्ठ ठः ठः स्थापनं, अत्र मम सन्निहितो भव–भव वषट् सन्निधिकरणं।

तर्ज : चौबीसी पूजा

जल बाह्य मलो को धोय, अन्तर मैला है।
जल से हम पूज रचाये, जिन उजियाला है।
श्री मंडप छाया बैठ, भक्ति नित्य करें।
जिन ज्ञान किरण मिल जाये, सारे कर्म हरें।

ॐ ह्रीं समवशरणस्थ चतुर्विंशति जिनेन्द्रेभ्यो जलं निर्वपामीति स्वाहा।

शुभ गंध सुगंध समान, चंदन प्रभु जी हैं।
करें शीतल, ताप नशाय, नंदन प्रभु जी हैं।
श्री मंडप छाया बैठ भक्ति नित्य करें।
जिन ज्ञान किरण मिल जाये, सारे कर्म हरें।

ॐ ह्रीं समवशरणस्थ चतुर्विंशति जिनेन्द्रेभ्यः चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

यह खंड–खंड संसार, हमको ना भाया।
शुभ शालि अखंडित पुंज चरणों में लाया।
श्री मंडप छाया बैठ...

ॐ ह्रीं समवशरणस्थ चतुर्विंशति जिनेन्द्रेभ्यो अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

आकुल व्याकुल परिणाम, इन्द्रिय सुख चाहे।
पुष्पों से पूज रचाऊँ, सत्पथ की राहें।
श्री मंडप छाया बैठ...

ॐ ह्रीं समवशरणस्थ चतुर्विंशति जिनेन्द्रेभ्यः पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

पकवान मनोहर नित्य, निश दिन हम खावें।
नैवेद्य चढ़ाऊँ नाथ, यह तन नश जावें।।
श्री मंडप छाया बैठ..

ॐ ह्रीं समवशरणस्थ चतुर्विंशति जिनेन्द्रेभ्यो नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

तम छाया है चहुं ओर, पथ में भटके हम।
दो ज्ञान दीप परकाश, सत्पथ पावें हम।।
श्री मंडप छाया बैठ..

ॐ ह्रीं समवशरणस्थ चतुर्विंशति जिनेन्द्रेभ्यो दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

कर्मों का है संसार, कुछ ना कर्म बिना।
कर्मों की धूप चढ़ायें, कुछ ना धर्म बिना।।
श्री मंडप छाया बैठ..

ॐ ह्रीं समवशरणस्थ चतुर्विंशति जिनेन्द्रेभ्यो धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

अमृत फल है जिन ध्यान, स्वाद नहीं लीना।
फल पाने फल ले आये, चरणों रस भीना।।
श्री मंडप छाया बैठ..

ॐ ह्रीं समवशरणस्थ चतुर्विंशति जिनेन्द्रेभ्यो फलं निर्वपामीति स्वाहा।

द्रव्यो की थाली लाये, अर्घ्य चढ़ाने को।
तेरी पूजा हम गायें भाव बढ़ाने को।।
श्री मंडप छाया बैठ..

ॐ ह्रीं समवशरणस्थ चतुर्विंशति जिनेन्द्रेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अथ प्रत्येक अर्घ्य

दोहा

स्वपर भेद विज्ञान से, देखा निज का रूप।
चौबीसों जिनराज जी, सिद्ध शिला के भूप।।

दोहा

बारह योजन का बना, बारह कोठे जान।
श्री मंडप के कोठे में, बैठे सकल समाज।।
आदिनाथ जिनदेव जी, अंतस् ज्ञान प्रकाश।
ज्ञान ज्योति मन भी जगे, ले आया ये आश।

ॐ ह्रीं समवशरणस्थ श्री आदिनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।1।

विजय वरण करके प्रभु, दिया दिव्य उपदेश।
साढ़े ग्यारह योजन में, फैला जन–जन वेश।।

ॐ ह्रीं समवशरणस्थ श्री अजितनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।2।

रत्नोमय खंभे लगे, सुंदरता की खान।
पर जिन रूप के सामने, नहि किसी का ध्यान।।
संभव ने संभव किया, मुक्ति मार्ग अंजान।
पद्चिन्हों पर जो चले, मिले मोक्ष स्थान।।

ॐ ह्रीं समवशरणस्थ श्री संभवनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।3।

साढ़े दस योजन हुआ, समवशरण का क्षेत्र।
लख अभिनंदन रूप को, खुले रहे सब नेत्र।।

ॐ ह्रीं समवशरणस्थ श्री अभिनन्दननाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।4।

सुंदर माला से सजा, समवशरण जिनराज।
मुरझाते ये फूल ना, है ये प्रभु का राज।।
दस योजन विस्तृत कहा, सुमतिनाथ स्थान।
सुर नर मिलकर पूजते, करते हैं हम ध्यान।।

ॐ ह्रीं समवशरणस्थ श्री सुमतिनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।5।

शोभा लख जिन महल की, आकर्षित हैं भव्य।
पापी को ना दर्श दे, नाही होय अभव्य।।
पद्मप्रभु जिनराज की महिमा अगम अपार।
तीन गति के जीव आ, करें धर्म से प्यार।।

ॐ ह्रीं समवशरणस्थ श्री पद्मप्रभ जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।6।

अमृतवर्षा हो रही, भव्य करें रसपान।
श्री मंडप की भूमि में, जावें जीव महान।।
चित्र बने सुन्दर वहां,लख हर्षित हैं जीव।
श्री सुपार्श्व के चरण में, पावे सौख्य अतीव।।

ॐ ह्रीं समवशरणस्थ श्री सुपार्श्वनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।7।

गगन बीच चंदा रहे, त्यों श्रीमंडप देव।
योजन साढ़े आठ हैं, करूँ चरण की सेव।।
धन कुबेर रचना करे, वैभव स्वर्ग से लाये।
चन्द्रप्रभु के चरण में, हम सब शीश झुकायें।।

ॐ ह्रीं समवशरणस्थ श्री चन्द्रप्रभ जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।8।

अष्ट द्रव्य मंगल सजे, धर्म चक्र मनहार।
अतिशय कांति के धनी, समवशरण तैयार।।
पुष्पदंत जिनराज का, अठ योजन का व्यास।
अर्घ्य चढ़ाऊँ भाव से, कलमल होवे साफ।।

ॐ ह्रीं समवशरणस्थ श्री पुष्पदंत जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।9।

कोट द्वार गोपुर बने, भवन बुलावे पास।
कंचन मणिमयी रत्न से, फैल रहा परकाश।।
शीतल–शीतल वचन से, शीतलता का दान।
शीतल सारे जीव हों, करें आत्म कल्याण।।

ॐ ह्रीं समवशरणस्थ श्री शीतलनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।10।

भामंडल के तेज से, फैला दिव्य प्रकाश।
सूर्य चन्द्र फीके पड़े, ना दिन हो ना रात।।
श्रेष्ठ अंश नहीं, पूर्ण हैं, श्री श्रेयांस जिन राज।
श्रेष्ठ हुये हैं जगत में, नमता सकल समाज।।

ॐ ह्रीं समवशरणस्थ श्री श्रेयांसनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।11।

ऋद्धि धारी मुनीवरा, प्रभू चरण के भक्त।
ज्ञान सुधारस पान कर, ना जग में आसक्त।।
देते सम्यक् दान हैं, वासुपूज्य भगवान्।
करूँ दर्श प्रत्यक्ष मैं, बारंबार प्रणाम।।

ॐ ह्रीं समवशरणस्थ श्री वासुपूज्य जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।12।

शंभू छंद

क्रम से आधा–आधा घटता, छह योजन समवशरण पाया।
श्री विमलनाथ निर्मल वाणी, पाने चरणों में मैं आया।।

हो अंत समय में भाव विमल, निर्मल आतम यह हो जावे।
तैयार रहें हर पल ज्ञानी, बस अंत समाधि मिल जावे।।
ॐ ह्रीं समवशरणस्थ श्री विमलनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।13।
हो आप अनंत नाथ स्वामी, हो सर्वगुणी गुणवान संत।
महिमा जग में सब गाते हैं, चरणों में मिलेगा मुक्ति पंथ।।
योजन था साढ़े पांच प्रभु, पर यशगाथा चहुं ओर हुई।
श्री अनंत नाथ के दर्शन से, तम हटा ज्ञान की भोर हुई।।
ॐ ह्रीं समवशरणस्थ श्री अनंतनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।14।
फहराते हैं ध्वज चहुंदिश में, मानो जिन का गुणगान करें।
लहराते हैं वे इसीलिये, भव्यों के सारे कर्म उड़ें।।
श्री धर्मनाथ ने धर्म दिया, धारण करके सब जीव तरे।
चरणों में अर्घ्य चढ़ाते हैं, सारे कर्मों को शीघ्र हरे।।
ॐ ह्रीं समवशरणस्थ श्री धर्मनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।15।
जीवों की चाहत एक ही है, जीवन में शांति छा जावे।
श्री शांतिनाथ की छाया में, माया से मुक्ति पा जावे।।
इच्छा है शांति पाने की, श्री शांतिनाथ की सेवा करो।
चरणों में अर्घ्य चढ़ा करके, काले कर्मों को शीघ्र हरो।।
ॐ ह्रीं समवशरणस्थ श्री शांतिनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।16।
शुभ समवशरण में बैठ प्रभु, संदेश धर्म का देते हैं।
ये भक्त भक्ति में रंग करके, जीवन नैया को खेते हैं।।
चउ योजन कुंथुनाथ जी का, शुभ समवशरण ही प्यारा था।
वाणी के पुष्प गिराये जिन, जग में सबसे ही न्यारा था।
ॐ ह्रीं समवशरणस्थ श्री कुंथुनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।17।
श्री अरनाथ जी नाश करें, कर्मों का धुआं उड़ाया है।
अंदर का वैभव प्रगट करें, मुक्ती को पास बुलाया है।।
संसार से तुम ना डरते हो, ना ही संसार रचाते हो।
जग में रहकर जग से न्यारे, मुक्ती का पाथ दिखाते हो।।
ॐ ह्रीं समवशरणस्थ श्री अरनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।18।
आनंदमयी दर्शन तेरा, आनंदमयी ही वाणी है।
आनंदामृत बरसाते हो, बन जाती वह जिनवाणी है।।

श्री मंडप पावन वसुन्धरा, सब जीवों में आनंद भरे।
त्रय योजन का यह समवशरण, अवगुण को सारे शीघ्र हरे।।
ॐ ह्रीं समवशरणस्थ श्री मल्लिनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।19।
मुनिसुव्रत व्रत धारण करके, सर्वोत्तम पद को पाया है।
उत्तम पद के दाता भी हो, फिर उत्तम सौख्य दिलाया है।।
संसार सिन्धु है गहरा प्रभु, किस तरह पार मैं जाऊँगा।
दो नाथ सहारा मुझको तो, मैं पास तुम्हारे आऊँगा।।
ॐ ह्रीं समवशरणस्थ श्री मुनिसुव्रतनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।20।
दो योजन का शुभ समवशरण, जीवों को शरणा देता है।
शुभ समवशरण के परमाणु, मन को भी पावन करता है।।
औदारिक तन पावन पाया, अन्तिम तन ही यह होता है।
निर्वाण मिलेगा इसको तज, संसार बीज ना बोता है।।
ॐ ह्रीं समवशरणस्थ श्री नमिनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।21।
छह कोश में फैला समवशरण, श्री नेमिनाथ जी जिनवर के।
यश गाथा सब मिल गाते हैं, हम भी गुण गाये गुरुवर के।।
रत्नत्रय ने है पार किया, मैं भी सम्यग्दर्शन पाऊँ।
आना-जाना जग से टूटे, जग में फिर से मैं ना आऊँ।।
श्री मंडप में राजुल बैठी, उपदेश प्रभु का सुनती हैं।
वैराग्य हुआ दीक्षा लीनी, निज आतम में चित्त धरती हैं।।
ॐ ह्रीं समवशरणस्थ श्री नेमिनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।22।
बस पांच कोश का समवशरण, श्री पार्श्वनाथ जिन ने पाया।
पारस सबको सोना करते, अब मैं पारस बनने आया।।
श्री मंडप में है कमठलाल, दश भव का बैर समाप्त किया।
सम्यग्दर्शन धारण करके, अपने कर्मों को शुभ्र किया।।
ॐ ह्रीं समवशरणस्थ श्री पार्श्वनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।23।
चतु कोश हुआ विस्तार प्रभु, जिन समवशरण महिमा न्यारी।
अंतिम तीर्थंकर श्री महावीर, चंदन बाला तुमने तारी।।
संग मुनिवर गणधर मोक्ष गये, और सबको पाथ दिखाया है।
भावों से अर्घ्य चढ़ाने को, यह भक्त चरण में आया है।।
ॐ ह्रीं समवशरणस्थ श्री महावीर जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।24।

दोहा

चौबीसों जिनराज जी, श्री मंडप स्थान।
चरण शरण आ पूजता, शीघ्र करो कल्याण।।

।।इत्याशीर्वादः पुष्पांजलिं क्षिपेत्।।

जयमाला

त्रिभंगी छंद

प्रभु समवशरण है, त्याग वरण है, महिमा तेरी गायेंगे।
निज आतम दृष्टि, अमृत वृष्टि, पाकर के हर्षायेंगे।
भूमि श्री मंडप, कर्म का खंडन, सुन वाणी को करते हैं।
भर पुण्य की झोली, मीठी बोली, कर्म निर्जरा करते हैं।

पद्धरि छंद

जय ऋषभ देव है महासंत, भव्यों को दिखाया मुक्ति पंथ।
शुभ समवशरण में राज रहे, प्रभु कमलासन पर साज रहे।
बारह कोठे सुंदर विशाल, आकर बैठे सब वृद्ध बाल।
अंतर में भक्ति दीप जले, बाहर का सब अभिमान गले।
उपदेश सभा सुंदर सुरूप, आते है श्रावक और भूप।
चहुंदिश में चतुमुख दिखते हैं, यह सभा देव ही रचते हैं।
मुनिराज प्रथम में राज रहे, ध्वनि सुन कर सुख में साज रहे।
दूजे में कल्प देवी बैठी, फिर आर्यिका श्राविका हैं देखी।
ज्योतिष व्यंतरनी भवनवास, सुरज्योतिष व्यंतर करें आश।
क्रम–क्रम से बैठे आप आय, फिर देव स्वर्ग के हैं बताय।
ग्यारह में चक्रवर्ती बैठे, बारह में पशुओं को देखे।
पशुओं का बैर विरोध मिटे, आपस में मिलते प्रेम दिखे।
संख्या ना देवी देवों की, संख्या ना नर पशु सेवों की।
आकुलता तन से दूर रहे, व्याकुलता मन से दूर रहे।
ना भूख लगे ना प्यास लगे, ना राग जगे ना मोह जगे।
शुभ भाव औ समता है पालन, संयम औ गुप्ती का लालन।
भामंडल आभा फेंक रहा, शुभ–शुभ परमाणु बांट रहा।

ना क्रोध आये ना लोभ आये, जिनवर प्रभुवर में मन रमाये।
ना चोरी है ना डाका है, जिनवर चरणों में झांका है।
आतंकित आतम ना ही रहा, ना ही कर्मों के दुःख सहा।
अमृत वृष्टि हर क्षण होती, अमृत की नदियां भी बहती।
जो जायेगा रस पान करे, तन मन का भी संताप हरे।
त्रिबार ध्वनि भी नित्य खिरे, भव्यों को सिन्धु पार करे।
मैं भी चरणां तरने आया, पूजन करके मैं हर्षाया।
हे नाथ कृपा की दृष्टि करो, हे नाथ दया की वृष्टि करो।
अब और कहीं ना जाऊँगा, दर्शन पाने नित आऊँगा।
यह तन मन आज समर्पित है, चरणों में जीवन अर्पित है।
चरणों से दूर नहीं करना, 'स्वस्ति' को भव सिन्धू तरना।

दोहा

समवशरण में सब चलों, दर्शन प्रभु का पायें।
परम पिता परमेश को, शत–शत शीश झुकायें।।

ॐ ह्रीं समवशरणस्थ चतुर्विंशतिजिनेन्द्रभ्यो पूर्णार्घ्यं निर्व. स्वाहा।

प्रभु दर्श प्रत्यक्ष पा, धन्य होय यह जीव।
आंखें पावन होयेंगी, मिलता सौख्य अतीव।

।।इत्याशीर्वादः पुष्पांजलिं क्षिपेत्।।

श्री मंडप अर्घ्यावली

चौपाई

चौथा कोट वज्रमय जानो, हीरा जैसी कांती मानो।
जिन तनु से चौगुना है ऊंचा, एक भाग मोटाई जैसा।।

ॐ ह्रीं जिनतनुतः चर्तुगुणोत्तुन्तुङ्गैभागायत वज्रमय श्वेत वर्ण चतुर्थ प्रकार संयुक्त समवशरण स्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्व.।।1।।

कोटों से किरणें हैं निकले, जग मग जग मग ज्योति दमके।
रात दिना का भेद न होता, पंच वर्ण रत्नों का गोता।।

ॐ ह्रीं चतुर्थप्राकारप्रबद्धकांतिसंयुक्त समवशरण स्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति।।2।।

कंगूरा ध्वज महल सहित है, रागद्वेष मद मोह रहित है।
सभी जगह सोपान लगे हैं, स्वर्णमयी कलशा ही जड़े हैं।।

ॐ ह्रीं चतुर्थप्राकारवुरज कंगूरा ध्वजासुशोभित विष्ठरविशिष्ट सप्तम–सोपानसंयुक्त समवशरण स्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति।।3।।

चढ़ सोपान चौंक में जावे, मणिमयी चौंक भी शोभा पावे।
चौंक छोड़ के कोट वज्र है, द्वार खड़े हैं हमें सब्र है।।

ॐ ह्रीं द्वारयुक्तचतुर्थ प्राकारसंयुक्त समवशरण स्थित जिनेन्द्रेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति।।4।।

द्वार पे तोरण शोभा पाये, दर्शन को सब देव ही आये।
पन्ना रत्न के हार बने हैं, झलके चित्र सुसौम्य सने हैं।।

ॐ ह्रीं अनेकरचनायुक्तद्वार सहित चतुर्थप्राकारसंयुक्त समवशरण स्थित जिनेन्द्रेभ्यों अर्घ्यं निर्वपामीति।।5।।

द्वारपाल द्वारे पर बैठे, गदा हाथ ले सबको देखे।
सुंदर लख हम सब हर्षाये, पूजा को प्रभु भक्त हैं आयें।।

ॐ ह्रीं द्वारपालसहितद्वारयुक्त चतुर्थप्राकारसंयुक्त समवशरण स्थित जिनेन्द्रेभ्यों अर्घ्यं निर्वपामीति।।6।।

कान में कुंडल हार हृदय में, कड़ा हाथ मुंदरी अंगुली में।
द्वारपाल सिर मुकुट चढ़ाये पद्मराग मणि कांति बढ़ाये।।

ॐ ह्रीं द्वारपालयुक्तद्वारसहित पंचमवेदिकायुक्तचतुर्थप्राकारसंयुक्त समवशरण स्थित जिनेन्द्रेभ्यों अर्घ्यं निर्वपामीति।।7।।

नये वस्त्र धारण है कीना, अलग शोभता रत्न नगीना।
पांचवी वेदी बनी है सुंदर, प्रभुवर बैठे जिसके अंदर।।

ॐ ह्रीं वज्रप्राकारपंचमवेदिकायाः अष्टमंगल्याः भूमौ उभयपार्श्व भूमेः चतुरन्तराल संयुक्त समवशरण स्थित जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति।।8।।

पंचम कोटी वज्र कोट है, भूमी आठवीं बनी ओट है।
गली भूमी बांई में आओ, भूमी में चतु अंतर पाओ।।
द्वादश शाल प्रकोष्ठ की रचना, ध्यान लगा आतम सुख चखना।
घंटा कलशा ध्वजा भी शोभे, दूर से ही सबका मन मोहे।।

ॐ ह्रीं अष्टमभूमौ विविधरचनायुक्तद्वादशशालप्रकोष्ठसंयुक्त समवशरण स्थित जिनेन्द्रेभ्यों अर्घ्यं निर्वपामीति।।9।।

दिशा आग्नेय में कोठे राजे, मुनिवर जिसमें शोभा पावे।
कल्पवासिनी देवी बैठी, नारी भी इसमें हैं देखी।।

ॐ ह्रीं आग्नेयदिशि कोष्ठत्रये दिगम्बर मुनि कल्पवासिनी मनुष्यनी संयुक्त समवशरण स्थित जिनेन्द्रेभ्यों अर्घ्यं निर्वपामीति।।10।।

नैऋत्य दिश में कोठे राजे, ज्योतिषी व्यंतर शोभा पावे।
भवन वासी भी आये है मनहर, दर्शन होवे हैं श्री जिनवर।।

ॐ ह्रीं नैऋत्यदिशि कोष्ठत्रये ज्योतिष्काव्यन्तरणीभवनवासिनी संयुक्त समवशरण स्थित जिनेन्द्रेभ्यों अर्घ्यं निर्वपामीति।।11।।

तीन कोठे वायव्य बखाने, व्यंतर भवनवासी सब आने।
ज्योतिष देव सुने जिनवाणी, जिनवर की वाणी कल्याणी।।

ॐ ह्रीं वायव्यदिशि कोष्ठत्रये ज्योतिष्क भवनव्यन्तरसुरवास संयुक्त समवशरण स्थित जिनेन्द्रेभ्यों अर्घ्यं निर्वपामीति।।12।।

कोठे तीन दिशा ईशान, कल्पवासी सुरनर सब आन।
बारहवे में तिर्यंच बताये, सब मिलकर के शीश झुकाये।।

ॐ ह्रीं ईशानदिशि कोष्ठत्रये कल्पोपपन्नदेवनर तिर्यंचसंयुक्त समवशरण स्थित जिनेन्द्रेभ्यों अर्घ्यं निर्वपामीति।।13।।

चौथा कोट वज्र का जानो, अड़तालीस वो भाग प्रमानो।
अष्टम भूमी सभा लगी है, वेदी पांचवीं ज्ञान मयी है।।

ॐ ह्रीं वज्रशालाष्टचत्वारिंशद्भागे वज्रमयचतुर्थशालतः चतुर्विंशति भागवेदिका संयुक्त समवशरण स्थित जिनेन्द्रेभ्यों अर्घ्यं निर्वपामीति।।14।।

वलय व्यास दो तरफ बताया, भाग चौबिसवां है घटवाया।
हम जिनेन्द्र पूजन में आये, श्रद्धा सुमन साथ में लाये।।

ॐ ह्रीं अष्टचापोच्चसूचीयुक्त–चतुःसहस्त्रचायप्रथमपीठसंयुक्त समवशरण स्थित जिनेन्द्रेभ्यों अर्घ्यं निर्वपामीति।।15।।

सोलह पैड़ी प्रथम पीठ में, आठ धनुष ऊंची है उसमें।
रत्नमयी शुभ शोभा पाये, पुण्य उदय से पाठ रचाये।।

ॐ ह्रीं चतुदिक्षु वसुमंगलद्रव्यधर्मचक्रसंयुक्त समवशरण स्थित जिनेन्द्रेभ्यों अर्घ्यं निर्वपामीति।।16।।

यक्ष देव रक्षा ही करते, प्रथम पीठ पर ठाड़े रहते।
यद्यपि खतरा वहां न कोई, जिनवर की महिमा है भाई।।

ॐ ह्रीं बद्धकर–मस्तकस्थधर्मचक्र–यक्षयुक्त प्रथमपीठसंयुक्त समवशरण स्थित जिनेन्द्रेभ्यों अर्घ्यं निर्वपामीति।।17।।

धर्मचक्र मस्तक पर धरते, प्रभु आज्ञा को सिर पर वरते।
ऐसे भक्त प्रभु के जानो, आज्ञा पर दीक्षा को मानो।।

ॐ ह्रीं विचित्रधर्मचक्रसंयुक्त समवशरण स्थित जिनेन्द्रेभ्यों अर्घ्यं निर्वपामीति।।18।।

दोहा

आरा एक हजार हैं, धर्म चक्र के बीच।
सुंदर पहियाकार हैं, तुम्हें झुकाऊँ शीश।।

ॐ ह्रीं प्रथमपीठेजिनपूजाकृत्वा निजकोष्ठस्थितिसंयुक्त समवशरण स्थित जिनेन्द्रेभ्यों अर्घ्यं निर्वपामीति।।19।।

धर्म चक्र के पास में, मंगल आठ दिखाय।
तीर्थंकर के महल में, जीव सभी हैं आय।।

ॐ ह्रीं द्वितीयपीठे इन्द्रगत्यभावातिशयव्यवस्थासंयुक्त समवशरण स्थित जिनेन्द्रेभ्यों अर्घ्यं निर्वपामीति।।20।।

जिनवर पूजा हम करें, इन्द्रदेव गुणवान।
अपने कोठे बैठ के, भक्ति करी महान।।

ॐ ह्रीं सुवर्णमयोच्चद्वितीयसंयुक्त समवशरण स्थित जिनेन्द्रेभ्यो जिनेन्द्रेभ्यों अर्घ्यं निर्वपामीति।।21।।

दूजे पीठ न जावता, जिनवाणी को जान।
अतिशय पुण्यों के धनी, शत–शत करूँ प्रणाम।।

ॐ ह्रीं विचित्रविविधरचनायुक्तद्वितीयपीठसंयुक्त समवशरण स्थित जिनेन्द्रेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति।।22।।

आठ सीढ़ी पच्चीस धनुष, पीठ दूसरा जान।
स्वर्णों मय है शोभती, तीर्थंकर भगवान।।

ॐ ह्रीं स्तम्भशिखरामरगोलायुक्तद्वितीयपीठसंयुक्त समवशरण स्थित जिनेन्द्रेभ्यों अर्घ्यं निर्वपामीति।।23।।

चित्रों की रचना हुई, खम्भ बताये नेक।
सुंदर सरस सुधार कर, माथा अपना टेक।।

ॐ ह्रीं विविधरचनायुक्तश्रीमण्डप संयुक्त समवशरण स्थित जिनेन्द्रेभ्यों अर्घ्यं निर्वपामीति।।24।।

कंचन मय खंबा खड़े, पंच वर्ण के रत्न।
शिखर सहित हैं शोभते, दर्श करन का यत्न।।

ॐ ह्रीं जिनतनुतः द्वादशगुणोच्चाशोकवृक्षसंयुक्त समवशरण स्थित जिनेन्द्रेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति।।25।।

कलशा तुंग ध्वजा चढ़ी, मोती झालर जान।
श्री मंडप शोभा बढ़े, बारंबार प्रणाम।।
बारह गुण ऊंचा हुआ, जिन वपु से अशोक।
चार दिशा के चार हैं, हरता सब का शोक।।

ॐ ह्रीं श्रीमण्डपोपरि विविधरचनायुक्त अशोकवृक्षशोभासंयुक्त समवशरण स्थित जिनेन्द्रेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति।।26।।

वृक्ष अनोखा है महा, नाशे सबका शोक।
जड़ हीरा शाखा कनक, दर्श से भागे रोग।।

ॐ ह्रीं एकसहस्त्रधनुरायत–चतुर्धनुरूच्च–तृतीयपीठसंयुक्त समवशरण स्थित जिनेन्द्रेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति।।27।।

पत्र बने पन्ना रतन, फूल लाल मय जान।
सुंदर फल ही पावते, करते जो परणाम।।

ॐ ह्रीं महाशोभायुक्ततृतीयपीठसंयुक्त समवशरण स्थित जिनेन्द्रेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति।।28।।

एक सहस धनु पीठ है, तीजा नयन निहार।
चार धनुष ऊंची भई, सीढ़ी सुंदर सार।।

ॐ ह्रीं गन्धकुटीसंयुक्त समवशरण स्थित जिनेन्द्रेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति।।30।।

आठ सीढ़ी रत्नों जड़ी, तृतीय पीठ की जान।
इन्द्रों ने रचना करी, करते रहें प्रणाम।।

ॐ ह्रीं अन्तिमत्रयोविंशति जिनेन्द्राणां क्रमहीनविस्तारापन्नगन्ध कुटीसंयुक्त समवशरण स्थित जिनेन्द्रेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति।।31।।

तीन पीठ ऊपर विषैं, गन्धकुटी मनहार।
सम चतुष्क के कोण में, होती है तैयार।।

ॐ ह्रीं वचनागोचर गन्धकुटीसंयुक्त समवशरण स्थित जिनेन्द्रेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति।।32।।

चौपाई

गंध कुटी सिंहासन प्यारा, सुंदर–सुंदर दिखे नजारा।
आभामय सुर रतन जड़े हैं, हाथ जोडकर सभी खड़े हैं।।

ॐ ह्रीं सुवर्णमयोच्चद्वितीसंयुक्त समवशरण स्थित जिनेन्द्रेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति।।33।।

सहस पत्र का स्वर्ण कमल है, भाव प्रभु का विमल–विमल है।
सिंहासन के ऊपर रहता, अमृत का झरना भी बहता।।

ॐ ह्रीं विचित्रविविधरचनायुक्तद्वितीयपीठसंयुक्त समवशरण स्थित जिनेन्द्रेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति।।34।।

अन्तरिक्ष में आप विराजे, देव बजाते हैं सब बाजे।
निराधार आधार नहीं है, मेरे प्रभु की बात सही है।।

ॐ ह्रीं स्तम्भशिखरामरगोलायुक्तद्वितीयपीठसंयुक्त समवशरण स्थित जिनेन्द्रेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति।।35।।

मामंडल मंडल में शोभित, भक्त सभी होते हैं मोहित।
तीर्थंकर का रूप अनोखा, दर्शन का मिल जाये मौका।।

ॐ ह्रीं विविधरचनायुक्तश्रीमण्डपसंयुक्त समवशरण स्थित जिनेन्द्रेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति।।36।।

सर्व जिनों की घटे ऊंचाई, आतम में कोई कमी न आई।
वैभव शक्ति पार न पाये, हम चरणों में शीश झुकाये।।

ॐ ह्रीं जिनतनुतः द्वादशगुणोच्चाशोकवृक्षसंयुक्त समवशरण स्थित जिनेन्द्रेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति।।37।।

वेदी कोट सुमंदिर सौहे, दूर से ही सबका मन मोहे।
नृत्यशाला और वृक्ष बने हैं, सुंदर मंदिर वहां खड़े हैं।।

ॐ ह्रीं श्रीमण्डपोपरि विविधरचनायुक्त अशोकवृक्षशोभासंयुक्त समवशरण स्थित जिनेन्द्रेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति।।38।।

गन्ध कुटी जिन पूजा

दोहा (स्थापना)

गंध कुटी के मध्य में, राजे देव महान।
द्रव्य थाल ले हाथ में, शत–शत करूँ प्रणाम।।
छत्र फिरे वंदन लगे, शोभा हर्ष अपार।
अतिशय प्रगटें देव के, दिखे धर्म का सार।।

ॐ ह्रीं चतुर्विंशति तीर्थंकर समवशरण स्थित गंध कुटी समूह अत्र अवतर संवौषट् आह्वाननं, अत्र तिष्ठ–तिष्ठ ठः ठः स्थापनं, अत्र मम सन्निहितो भव–भव वषट् सन्निधिकरणं। परिपुष्पांजलिं क्षिपेत्।

(तर्ज : नीर गंध...)

हे जगत के देव मेरी, प्रार्थना सुनीजिये।
ले के जल मैं आ गया, ध्यान मुझपे दीजिये।।
गंधकुटी पूजहूँ, श्री जिनेश राजते।।
दर्श होय एक बार, कर्म सारे भाजते।।

ॐ ह्रीं चतुर्विंशति तीर्थंकर समवशरण स्थित गंध कुटीभ्यो जलं निर्व. स्वाहा।

अंतरंग शांत हो, ताप दूर कीजिए।
विभाव से स्वभाव हो, भक्त शरण लीजिए।।
गंधकुटी पूजहूँ...

ॐ ह्रीं चतुर्विंशति तीर्थंकर समवशरण स्थित गंध कुटीभ्यः चंदनं निर्व. स्वाहा।

स्वार्थ औ पदार्थ में, समस्त अर्थ भूलते।
ज्ञान मूर्ति आप हो, नहिं जगत में झूलते।।
गंधकुटी पूजहूँ...

ॐ ह्रीं चतुर्विंशति तीर्थंकर समवशरण स्थित गंध कुटीभ्यो अक्षतं निर्व. स्वाहा।

दर्श ज्ञान सौख्य वीर्य, निजात्म के ही संग में।
किन्तु कर्म ढांकते, रंगे उसी के रंग में।।
गंधकुटी पूजहूँ...

ॐ ह्रीं चतुर्विंशति तीर्थंकर समवशरण स्थित गंध कुटीभ्यः पुष्पं निर्व. स्वाहा।

भूख भोज्य मांगता, ना आत्म ध्यान ध्यावता।
भूख नष्ट हो मेरी, मैं चरण में आवता।।
गंधकुटी पूजहूँ...

ॐ ह्रीं चतुर्विंशति तीर्थंकर समवशरण स्थित गंध कुटीभ्यो नैवेद्यं निर्व. स्वाहा।

ज्ञान रश्मि का प्रकाश, भौतिकी से तेज है।
पूर्ण ज्ञान प्राप्त हो, धर्म की ये सेज है।।
गंधकुटी पूजहूँ...

ॐ ह्रीं चतुर्विंशति तीर्थंकर समवशरण स्थित गंध कुटीभ्यो दीपं निर्व. स्वाहा।

सर्वव्यापी धर्म है, किंतु धर्म दूर है।
धूम कर्म की उड़े औ ज्ञान आवे पूर है।।
गंधकुटी पूजहूँ...

ॐ ह्रीं चतुर्विंशति तीर्थंकर समवशरण स्थित गंध कुटीभ्यो धूपं निर्व. स्वाहा।

कर्म देव सौख्य दु:ख, शोक हर्ष मैं करूँ।
चाहूँ फल मैं मुक्ति का, जिन चरण में फल धरूँ।।
गंधकुटी पूजहूँ...

ॐ ह्रीं चतुर्विंशति तीर्थंकर समवशरण स्थित गंध कुटीभ्यः फलं निर्व. स्वाहा।

अष्ट द्रव्य अर्घ्य ले, पूजने को आ गया।
तेरा ही स्वरूप मुझे, हे जिनेन्द्र भा गया।।
गंधकुटी पूजहूँ...

ॐ ह्रीं चतुर्विंशति तीर्थंकर समवशरण स्थित गंध कुटीभ्यो अर्घ्य निर्व. स्वाहा।

अथ प्रत्येक अर्घ्य

दोहा

आत्मज्ञान प्रतिबिम्ब है, ज्ञान का तेज अपार।
ज्ञानी मेरे देव हैं, देवें सौख्य अपार।।

।।इति मण्डलस्योपरि पुष्पांजलिं क्षिपेत्।।

चाल छंद

रत्नों मय पीठ बने हैं, किरणों के पुंज घने हैं।
श्री आदिनाथ जिनदेवा, मैं करूँ चरण की सेवा।।
यह गंध कुटी शुभ प्यारी, जिनवर की शोभा न्यारी।
भावों से अर्घ्य चढ़ायें, हम समवशरण में जायें।।

ॐ ह्रीं श्री वृषभदेव समवशरण स्थित तृतीय पीठो परिगंध कुट्यै अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।1।

निष्काम योग को धारा, कर्मों का रेला हारा।
जिन अजित जगत को जीते, सारे कर्मों से रीते।।
यह गंध कुटी शुभ प्यारी...

ॐ ह्रीं श्री अजितनाथ समवशरण स्थित तृतीय पीठो परिगंध कुट्यै अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।2।

पी आत्मानंद का प्याला, तोड़ा कर्मों का जाला।
संभव भव संभव करते, सारे कर्मों को हरते।।
यह गंध कुटी शुभ प्यारी...

ॐ ह्रीं श्री संभवनाथ समवशरण स्थित तृतीय पीठो परिगंध कुट्यै अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।3।

सौभाग्य जगा नंदन का, मेला छूटा बंधन का।
अभिनंदन आनंद पाये, ज्ञानामृत भी बरसाये।।
यह गंध कुटी शुभ प्यारी...

ॐ ह्रीं श्री अभिनंदननाथ समवशरण स्थित तृतीय पीठो परिगंध कुट्यै अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।4।

अंतस का सूर्य उगाया, फिर ज्ञान पुंज फैलाया।
सुमति का धन बढ़ जाये, पाने चरणों में आये।।
यह गंध कुटी शुभ प्यारी...

ॐ ह्रीं श्री सुमतिनाथ समवशरण स्थित तृतीय पीठो परिगंध कुट्यै अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।5।

सिंहासन रत्न जड़े हैं, द्वारों पर देव खड़े हैं।
जिन धर्म फूल खिल जाये, पदमा की शरणा आये।।
यह गंध कुटी शुभ प्यारी...

ॐ ह्रीं श्री पद्मप्रभ जिन समवशरण स्थित तृतीय पीठो परिगंध कुट्यै अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।6।

गंगा सम स्वच्छ बनाये, आतम में ध्यान लगाये।
दिव्यामृत जिनवर देते, संकट सारे हर लेते।।
यह गंध कुटी शुभ प्यारी...

ॐ ह्रीं श्री सुपार्श्वनाथ समवशरण स्थित तृतीय पीठो परिगंध कुट्यै अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।7।

आराध्य हमारे चंदा, आराधक आया बंदा।
उजियारा प्रभु फैलाओ, चरणों के पास बुलाओ।।
यह गंध कुटी शुभ प्यारी...

ॐ ह्रीं श्री चन्द्रप्रभ जिन समवशरण स्थित तृतीय पीठो परिगंध कुट्यै अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।8।

सारे थे शुभ शुभ लक्षण, पाया था रूप विलक्षण।
हे पुष्पदंत जी भगवन, आया हूँ तेरे चरणन।।
यह गंध कुटी शुभ प्यारी...

ॐ ह्रीं श्री पुष्पदंतजिन समवशरण स्थित तृतीय पीठो परिगंध कुट्यै अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।9।

तप से शीतलता पाई, शीतल शुभ गंध उड़ाई।
शीतल–शीतल के देवा, नित करूँ आपकी सेवा।।
यह गंध कुटी शुभ प्यारी...

ॐ ह्रीं श्री शीतलनाथ समवशरण स्थित तृतीय पीठो परिगंध कुट्यै अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।10।

नीति–रीति अपनाई, तप सौख्य संपदा पाई।
श्रेयांस श्रेष्ठ पद पाया, चरणों में भाव जगाया।।
यह गंध कुटी शुभ प्यारी...

ॐ ह्रीं श्री श्रेयांसनाथ समवशरण स्थित तृतीय पीठो परिगंध कुट्यै अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।11।

तज राग द्वेष का मेला, हो वीतरागी जिन बेला।
वसुधा पर जिनवर आये, घर द्वार छोड़ हम आये।।
यह गंध कुटी शुभ प्यारी...

ॐ ह्रीं श्री वासुपूज्यजिन समवशरण स्थित तृतीय पीठो परिगंध कुट्यै अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।12।

भक्तों का हृदय खिलाया, सम्यक् दर्शन दिलवाया।
जय विमलनाथ जिन स्वामी, दुख मेटो अन्तरयामी।।
यह गंध कुटी शुभ प्यारी...

ॐ ह्रीं श्री विमलनाथजिन समवशरण स्थित तृतीय पीठो परिगंध कुट्यै अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।13।

स्वर्णिम इतिहास बनाया, आदर्शमयी पथ पाया।
कर्मों का अंत है कीना, शाश्वत सुख को पा लीना।।
यह गंध कुटी शुभ प्यारी...

ॐ ह्रीं श्री अनंतनाथजिन समवशरण स्थित तृतीय पीठो परिगंध कुट्यै अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।14।

निर्लिप्त निरंजन हो तुम, पापों के भंजक हो तुम।
जिनधरम धरम को बांटें, सबके पापों को छांटें।।
यह गंध कुटी शुभ प्यारी...

ॐ ह्रीं श्री धर्मनाथजिन समवशरण स्थित तृतीय पीठो परिगंध कुट्यै अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।15।

भक्तों को शक्ति देते, कर्मों को सब हर लेते।
श्री शांतिनाथ जी देवा, मैं करूँ आपकी सेवा।।
यह गंध कुटी शुभ प्यारी...

ॐ ह्रीं श्री शांतिनाथ समवशरण स्थित तृतीय पीठो परिगंध कुट्यै अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।16।

शुभ समवशरण रचवाया, भक्तों को पास बुलाया।
संदेश धर्म का देते, सारे कल्मश हर लेते।।
यह गंध कुटी शुभ प्यारी...

ॐ ह्रीं श्री कुंथुनाथ समवशरण स्थित तृतीय पीठो परिगंध कुट्यै अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।17।

आतम पर शासन कीना, आतम से आतम लीना।
अर अरि करम विनशायें, मुक्ति में जा बस जायें।।
यह गंध कुटी शुभ प्यारी...

ॐ ह्रीं श्री अरनाथ समवशरण स्थित तृतीय पीठो परिगंध कुट्यै अर्घ्यं निर्व. स्वाहा ।18।

सतयुग में सत की सत्ता, प्रगटाई थी भगवंता।
जिन कर्मों का मल धोया, ना बीज पाप का बोया।।
यह गंध कुटी शुभ प्यारी...

ॐ ह्रीं श्री मल्लिनाथ समवशरण स्थित तृतीय पीठो परिगंध कुट्यै अर्घ्यं निर्व. स्वाहा ।19।

केवल की किरणें फैलीं, गणधर ने वाणी झेली।
मुनिसुव्रत व्रत को देते, आतम की शुद्धि करते।।
यह गंध कुटी शुभ प्यारी...

ॐ ह्रीं श्री मुनिसुव्रतनाथ समवशरण स्थित तृतीय पीठो परिगंध कुट्यै अर्घ्यं निर्व. स्वाहा ।20।

घनघोर तपस्या कीनी, निज में निज दृष्टि दीनी।
जिन भेद ज्ञान प्रगटाया, मैं समवशरण में आया।।
यह गंध कुटी शुभ प्यारी...

ॐ ह्रीं श्री नमिनाथ समवशरण स्थित तृतीय पीठो परिगंध कुट्यै अर्घ्यं निर्व. स्वाहा ।21।

प्रभु तुम हो करूणा नंदन, हम करते तुमको वंदन।
राजुल से मुख को मोड़ा, मुक्ति से नाता जोड़ा।।
यह गंध कुटी शुभ प्यारी...

ॐ ह्रीं श्री नेमिनाथ समवशरण स्थित तृतीय पीठो परिगंध कुट्यै अर्घ्यं निर्व. स्वाहा ।22।

पारस अमृत बरसाते, भक्ति में भक्त नहाते।
मैं अमृत पाने आया, चरणों में अर्घ्य चढ़ाया।।
यह गंध कुटी शुभ प्यारी...

ॐ ह्रीं श्री पार्श्वनाथ समवशरण स्थित तृतीय पीठो परिगंध कुट्यै अर्घ्यं निर्व. स्वाहा ।23।

अंतिम तीर्थंकर वीरा, जैसे रत्नों में हीरा।
सुन नर पूजा को आये, आकर के अर्घ्य चढ़ाये।।
यह गंध कुटी शुभ प्यारी...

ॐ ह्रीं श्री महावीर जिन समवशरण स्थित तृतीय पीठो परिगंध कुट्यै अर्घ्यं निर्व. स्वाहा ।24।

दोहा

अष्ट द्रव्य मंगल सहित, गंधकुटी शुभ जान।
वास करें जिनदेव जी, शत–शत करूँ प्रणाम।।

ॐ ह्रीं चतुर्विंशति तीर्थंकर जिन समवशरण स्थित तृतीय पीठो परिगंध कुट्यै पूर्णार्घ्यं निर्व. स्वाहा।

जयमाला

चौपाई

तीर्थंकर को नमस्कार हो, जिनवर जी को नमस्कार हो।
गंधकुटी शुभ शोभा पाये, करने दर्शन भक्त भी आये।
सम्पत्ति स्वर्गों से आयी, समवशरण रचना करवायी।
हाथ जोड़कर इन्द्र भी बैठे, रूप निहारे जिनवर देखे।
चहुं दिश में सजती मालायें, नृत्य करें संग में बालायें।
कनक कांति सम रूप सम्हारे, भक्त एकटक तुम्हें निहारे।
ध्वज की पंक्ति शोभ बढ़ायें, केशरिया सम गगन दिखाये।
रत्न जड़ित सिंहासन प्यारा, दूर–दूर से दिखे नजारा।
मंगल द्रव्य हैं मंगलकारी, द्रव्य आठ लगते सुखकारी।
दिव्य ध्वनि उपदेश की वाणी, गणधर समझाते जिनवाणी।
महिमा प्रभु गणधर भी गायें, तो भी ना पूरी कर पायें।
झूम–झूम कर इन्द्र भी नाचे, धर्म कथा को नित ही बांचे।
मंद वृष्टि, औ शीतल वायु, घटती ना है कुछ भी आयु।
तरू अशोक है जिनके पीछे, प्रभुवर बैठे आंखें मीचे।
तीन छत्र शुभ सिर पर फिरते, सभी फूल पंक्तियों में गिरते।
हिंसा होती है वहां नहीं, चोरी का कोई धाम नहीं।
आंसू का कोई काम नहीं, दुख का होवे विश्राम नहीं।
आगम ने गम को है मारा, सुख ने सारे दु:ख को तारा।
शास्त्रों ने शस्त्र को दूर किया, अम्बर ने वस्त्र को दूर किया।

तम, गम, नम होकर के जाते, छल कपट वहां न रूक पाते।
चरणों की धूलि सिर धारूँ, फिर नहिं किसी से मैं हारूँ।
श्रद्धा भी है विश्वास भी है, भक्ति करता हूँ आश भी है।
आतम दर्शन मम करवाना, निज आतम रूप संवर जाना।
डाली से टूटे फूल तभी, जब होय समाधि मेरी सही।
चेतन औ तन को पहचानूँ, दोनों को भिन्न–भिन्न जानूँ।
मिट्टी की मूरत बन जाये, भक्ति से आत्म निखर जाये।
मैं नहीं कभी लाचार बनूँ, दुखियों के आंसू पोंछ सकूँ।
किसकी दुनियां किसका नाता, स्वारथ के साथी सब भ्राता।
जब मोह नष्ट हो जायेगा, यह जनम मरण नश जायेगा।
तुम मोह से नाता तोड़ दिया, आतम से नाता जोड़ लिया।
तुम सत्य सूर्य प्रगटाया है, भक्तों को ज्ञान सिखाया है।
हम गंध कुटी के दर्श करें, दर्शन करके हम हर्ष धरें।
समकित रत्नों को पाऊँ मैं, मुक्ति में जा बस जाऊँ मैं।
'स्वस्ति' को चरणों में रखना, शुभ गंधकुटी का रस चखना।

दोहा

गंध कुटी शुभ तीर्थ है, करूँ नित्य स्नान।
मिले आसरा प्रभु चरण, बारम्बार प्रणाम।।

ॐ ह्रीं चतुर्विंशति तीर्थंकर गंधकुटी स्थित तृतीय पीठो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

धरूँ आशिका शीश पर, शुभाशीष दें देव।
भव सागर से तर सकूँ, करूँ आपकी सेव।।

।। इत्याशीर्वादः पुष्पांजलिं क्षिपेत्।।

चक्रवर्ती, बलभद्र, नारायण, कामदेव आदि अनेक राजाओं द्वारा

समवशरण में क्रियमाण पूजा

दोहा

चक्रवर्ती बलभद्रजी, समवशरण में आये।
महापुरुष भी आय के, चरणन शीश झुकाये।।

ॐ ह्रीं समवशरणस्थ जिनेन्द्र अत्र, अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननं, अत्र तिष्ठ–तिष्ठ ठः ठः स्थापनं, अत्र मम सन्निहितो भव–भव वषट् सन्निधिकरणं।

गीता छंद

नीर है जग में बहुत पर, रतनत्रय निर्मल कहा।
मैं क्षीर सा ही नीर लाया, भाव शुद्धी हो महा।।
बलभद्र चक्री भूप मिल, जिनदेव की पूजा करें।
शुभ भाव से चरणों में आये, कर्म सारे परि हरें।।

ॐ ह्रीं समवशरणस्थ जिनेन्द्राय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

हो शांत शिव सुंदर प्रभो, न ताप ना संताप है।
ले चंदनादि पूजता, मेटो सकल भवताप है।।
बलभद्र चक्री भूप मिल...

ॐ ह्रीं समवशरणस्थ जिनेन्द्राय चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

पग–पग पे जा के पद बदलना, आप इससे दूर हैं।
अक्षयपुरी के हो निवासी, सौख्य भी भरपूर है।।
बलभद्र चक्री भूप मिल...

ॐ ह्रीं समवशरणस्थ जिनेन्द्राय अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

रति छोड़ अविरति पाने को प्रभु, पुष्प सुंदर लाये हैं।
मम आत्मा रक्षित करो, यह भावना हम भाये हैं।।
बलभद्र चक्री भूप मिल...

ॐ ह्रीं समवशरणस्थ जिनेन्द्राय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

कामना से दूर हो तुम, साधना अतिशय घनी।
तुम वैद्य हो, नैवेद्य के, प्रभु आज तुमसे ही बनी।।
बलभद्र चक्री भूप मिल...

ॐ ह्रीं समवशरणस्थ जिनेन्द्राय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मिथ्यात्व का तम है घना, सम्यक उजाला चाहिये।
यह दीप रत्नों मय चढ़ाऊँ, ज्ञान केवल चाहिये।।
बलभद्र चक्री भूप मिल...

ॐ ह्रीं समवशरणस्थ जिनेन्द्राय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

अवगुण हैं रहते दूर तूमसे, गुण के प्रभु भंडार हैं।
दीपों की धूप चढ़ाऊँ भगवन, मिले मुक्ति द्वार हैं।।
बलभद्र चक्री भूप मिल...

ॐ ह्रीं समवशरणस्थ जिनेन्द्राय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

सद्बुद्धि श्रावक मुक्ति पथपर, आगे को बढ़ता चले।
फल को चढ़ाऊँ फल न चाहूँ, साधना दीपक जले।।
बलभद्र चक्री भूप मिल...

ॐ ह्रीं समवशरणस्थ जिनेन्द्राय फलं निर्वपामीति स्वाहा।

चारों कषायों का शमन कर, भावना शुभ भाऊँगा।
यह अर्घ्य ज्योति साथ लाया, निज में ही रम जाऊँगा।।
बलभद्र चक्री भूप मिल...

ॐ ह्रीं समवशरणस्थ जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाला

त्रिभंगी

निज फूल खिलाकर, हर्ष बढ़ाकर, राजा पूजन को आये।
भवताप मिटाये, पुष्प चढ़ाये, श्रद्धा भर आतम लाये।।
प्रभु रोशन करते, दोष को हरते, दीक्षा को सबने पाया।
कर्मों का झरना, पाप को हरना, आतम आनंद है आया।।

चौपाई

चारों घाती कर्म नशाये, चार चतुष्टय प्रभु ने पाये।
चार ध्यान को ध्याया प्रभु ने, आतम आनंद लिया था निज में।।
राक्षस क्रोध भी दूर है भागा, क्षमा भाव का धर्म है जागा।
क्रोधी आकर क्रोध नशाये, मन में अतिशय शांति पाये।।
क्रोध करें जीवों की हिंसा, क्रोध करे भावों की हिंसा।
क्रोध पाप को पास बुलाता, क्रोध जगत में है भटकाता।।
दुखी क्रोध से जनता सारी, फिर भी क्रोध न छूटे भारी।
क्रोध ने मित्र को शत्रु बनाया, अपना ही तब हुआ पराया।।
अपना सपना ही हो जावे, जब यह राक्षस क्रोध है आवे।
समता औ सद्‌गुण हट जावे, जीवों को जग में भटकावे।।
मोह क्रोध का जनक बताया, मिथ्या इसने ज्ञान बनाया।
स्वयं फले सबको फलवाये, मोही मोह में धर्म न पाये।।
समता सुधा ज्ञान भंडारी, समवशरण की महिमा न्यारी।
स्वयं तिरे सबको तिरवावे, जो भी तेरी शरण में आवे।।
आप क्रोध को दूर हटाया, क्षमा भाव निज में प्रगटाया।
निज में निज का ध्यान लगाया, दुष्ट कर्म को आप भगाया।।
अनंत चतुष्टय के तुम धारी, केवल ज्ञानी सुख भंडारी।
समवशरण रचना हुई सुंदर, हर्षे इन्द्र भी मन में अंदर।।
देव देवियां स्वर्ग से आईं, प्रभु दर्शन कर वे हर्षाईं।
चक्रवर्ती बलदेव भी आये, चरणों में वह शीश झुकाये।।
कामदेव नारायण आया, महा पूजा का पाठ कराया।
द्रव्यों के बहु थाल भराये, गंगा नद सम नीर चढ़ाये।।
चंदन पर भौरे गुंजाये, धूप चढ़े तो मेघ बनाये।
अर्घों का पर्वत बन जाये, महा पूजा महापुरूष कराये।।
राजा मंडलीक मंडल भी, महा पूजा मंगलमय होती।
समवशरण का अतिशय भारी, सम अवसर पायें नरनारी।।
चौबीस जिन को शीश झुकायें, चरणों में हम पूज रचायें।
जिनवर की वाणी भी मिलती, सम्यग्ज्ञान की कलियां खिलती।।
नर तिर्यंच भी भक्ति गावें, गाकर अतिशय पुण्य कमावें।
जिनवर अमृत ज्ञान में बांटे, फूल ही फूल नहीं हैं कांटे।।

हों दर्शन कब समवशरण के, हो स्पर्शन प्रभु चरण के।
'स्वस्ति' भी यह आश लगाये, तब आकर प्रभु दर्श दिखायें।।

दोहा

समवशरण जिनदेव का, तारे जीव हजार।
अवसर मुझ को भी मिले, हम भी हैं तैयार।।

ॐ ह्रीं समवशरणस्थ चतुर्विंशति जिनेन्द्रायः जयमाला पूर्णर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

महापुरुष सम पूजा कर, महाभाव प्रगटाय।
महा मोक्ष पदवी मिले, शत–शत शीश नवाय।।

इत्याशीर्वादः परिपुष्पांजलिं क्षिपेत्।

समुच्चय पूजा प्रारम्भ

स्थापना

(गीता छंद)

त्रैलोक्य में जिन चैत्य हैं, मिल हम सभी पूजा करें।
संसार सागर पार होने, आराधना हम नित करें।
भगवान की भक्ति सभी को, शांति सुख समृद्धि दे।
मनहर प्रभु की मूर्ति ही, सब ऋद्धि दे सब सिद्धि दें।

ॐ ह्रीं समवशरणस्थ श्री चतुर्विंशति जिन अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननं, अत्र तिष्ठ–तिष्ठ ठः ठः स्थपनं, अत्र मम सन्निहितो भव–भव वषट् सन्निधिकरणं। परिपुष्पांजलिं क्षिपेत्।

शंभु छंद

जल का स्वभाव तो निर्मल है, तन मन को शुची बनाता है।
निज आत्म शुद्धि की प्राप्ति करें, जिससे मम हिय हर्षाता है।।
संसार में हमने जिनवर जी, कर्मों के सारे कष्ट सहे।
चौबीसों जिन पूजन करते, स्वर्गापवर्ग का मार्ग लहे।।

ॐ ह्रीं समवशरणस्थ श्री चतुर्विंशति तीर्थकर जिनेन्द्राय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

संसार ताप संताप प्रभो, क्षण–क्षण में दुःख बढ़ाता है।
मन चिंता–चिंता करता है, वह चैन कहीं ना पाता है।।
संसार में हमने जिनवर जी...

ॐ ह्रीं समवशरणस्थ श्री चतुर्विंशति तीर्थकर जिनेन्द्राय चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

अक्षत क्षय विक्षत होता है, प्रतिपल पर्याय बदलती है।
अक्षय पद मुझको मिल जाये, ऐसी प्रभु मेरी विनती है।।
संसार में हमने जिनवर जी...

ॐ ह्रीं समवशरणस्थ श्री चतुर्विंशति तीर्थकर जिनेन्द्राय अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

पुष्पों की गंध तो नश्वर है, खुशबू निज आतम की फैले।
चरणों में पुष्प मैं लाया हूँ, संयम से आतम में रह ले।।
संसार में हमने जिनवर जी...

ॐ ह्रीं समवशरणस्थ श्री चतुर्विंशति तीर्थकर जिनेन्द्राय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

व्यंजन नित नये बना खाये, पर तृप्त नहीं यह मन होता।
व्यंजन की थाली ले आया, जो क्षुधा रोग को नश देता।।
संसार में हमने जिनवर जी...

ॐ ह्रीं समवशरणस्थ श्री चतुर्विंशति तीर्थकर जिनेन्द्राय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अंधियारा मोह महातम है, निज यथातथ्य न दिख पाया।
मालायें दीपक की लेकर, जिनवर पूजन को मैं आया।।
संसार में हमने जिनवर जी...

ॐ ह्रीं समवशरणपस्थ श्री चतुर्विंशति तीर्थकर जिनेन्द्राय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

बहु कर्मों का ही जोर चले, पुरुषार्थ हीन हो जाता हूँ।
कर्मों का धुआं उड़ाने को, मैं धूप चरण में लाता हूँ।।
संसार में हमने जिनवर जी...

ॐ ह्रीं समवशरणस्थ श्री चतुर्विंशति तीर्थकर जिनेन्द्राय धूंप निर्वपामीति स्वाहा।

तेरी पूजन से हे प्रभुवर, मैं मुक्ति फल की चाह करूँ।
पर सु:ख नहीं हे इस जग में, फल अर्पण कर शिवनारी वरूँ।।
संसार में हमने जिनवर जी...

ॐ ह्रीं समवशरणस्थ श्री चतुर्विंशति तीर्थकर जिनेन्द्राय फलं निर्वपामीति स्वाहा।

ये अर्घ्य करे उपसर्ग दूर, फिर मैं अनर्घ्य पद पाऊँगा।
चरणों में अर्घ्य चढ़ा करके, मैं तो मुक्ति को जाऊँगा।।
संसार में हमने जिनवर जी...

ॐ ह्रीं समवशरणस्थ श्री चतुर्विंशति तीर्थकर जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाला

(त्रिभंगी छंद)

चौबीस जिन स्वामी, अंतर्यामी, कष्ट हटायें सुखकारी।
त्रिभुवन के दाता, जग विख्याता, मिलेगी साता हे स्वामी।।

(पद्धरी छंद)

जय ऋषभ देव अंतर्यामी, हे अजितनाथ सबके स्वामी।
जय संभव भव का करें नाश, अभिनंदन जग करते प्रकाश।
जय सुमति–सुमति दायक दयाल, जय पद्म प्रभु हर्षे दे ताल।
जय–जय सुपार्श्व हे मुक्ति वास, चंदा प्रभु करते हैं उजाश।
पुष्पों से सुंदर पुष्पदंत, चंदन से शीतल मुक्ति कंत।
श्रेयांस नाथ हैं श्रेष्ठ धनी, जय वायुपूज्य तुम मुक्ति सनी।
निर्मल निर्मल हो विमल नाथ, जय प्रभु अनन्त भक्तों के साथ।
जय धर्म–धर्म को करें दान, जय शांति–शांति दाता महान।
जय कुंथुनाथ चक्री विशेष, अर जिन के संग न कर्म लेश।
जय मल्लिनाथ शिव शांति वरें, मुनिसुव्रत पीड़ा दूर करें।
जय नमिनाथ निज ध्यान किया, नेमी भव बंधन तोड़ दिया।

पारस सब चिंता दूर करें, श्री महावीर का ध्यान धरें।
कर्मों के हम तो हैं सताये, चौबिस जिन की पूजा रचायें।
मन वचन तन से हम करें भक्ति, संसार चक्र से होय मुक्ति।

समुच्चय अर्घ्य

दोहा

चौबीसों के चरण पद, जो पूजें सुखकार।
'स्वस्ति' मोक्ष पदवी मिले, आतम आनन्दकार।।

ॐ ह्रीं समवशरणस्थ श्री चतुर्विंशति तीर्थंकर जिनेन्द्राय पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सम्पूर्ण जयमाला

त्रिभंगी छंद

चौबीस जिनन्दा, तोड़े फन्दा, समवशरण सुंदर प्यारा।
सब रोग नशाये, शोक भगाये, जग में सबसे है न्यारा।।
कर्मों की राशि, मोह की फांसी, जीवों को दुखमय करती।
तुम चरण जो आवे, शांति पावे, दुखियों के दुख को हरती।।

पद्धरि छंद

श्री अरहंता देव नमस्ते, श्री भगवंता देव नमस्ते।
चार घातिया घात नमस्ते, जोड़ के दोनों हाथ नमस्ते।
कल्याणक को पाय नमस्ते, इन्द्र देव हर्षाय नमस्ते।
भक्त के पालन हर नमस्ते, संकट टारन हार नमस्ते।
मोह महातम नाश नमस्ते, गुणगण का है वास नमस्ते।
मूलगुण छयालीस नमस्ते, तुमको शीश झुकाऊँ नमस्ते।
सम अवसर दातार नमस्ते, पंच महा पालाय नमस्ते।
नाथों के हो नाथ नमस्ते, दीन दुखी के साथ नमस्ते।
केवल ज्ञान की ज्योति नमस्ते, आनंद मोती पाया नमस्ते।
जनमत अतिशय होय नमस्ते, वसुधा रत्न गिराय नमस्ते।
पुण्य देय भंडार नमस्ते, मुक्ति पथ दरशाय नमस्ते।

प्रातिहार्य से सहित नमस्ते, अवगुण से हो रहित नमस्ते।
दीक्षा देवन हार नमस्ते, शिक्षा देवन हार नमस्ते।
जिनवाणी के पूत नमस्ते, शांति के साम्राज्य नमस्ते।
जय जय जय उच्चार नमस्ते, धर्म की आय बहार नमस्ते।
दुंदुभि सुस्वर गान नमस्ते, पुष्पवृष्टि वरदान नमस्ते।
हो टिमकार से रहित नमस्ते, ओठ् हिले न आप नमस्ते।
बरसे अमृत धार नमस्ते, पाये सब नर नार नमस्ते।
रोग शोक शत्बार नमस्ते, मुक्ति वरण मनहार नमस्ते।
'स्वस्ति' करे प्रणाम नमस्ते, गुण–गण के तुम धाम नमस्ते।

शंभू–छन्द

करूणासागर गुण गण आगर, भक्तों की टोली आई है।
प्रभु दुःख हटा संपत्ति वर दो, भावों की झोली लाई है।।
शुभ समवशरण प्रभु दर्शन कर, सम्यग्दर्शन हो जाता है।
अज्ञान हटे सब द्वेष मिटे, तन की निरोगता पाता है।।
बिना इच्छा होता गमन देव, करके बिहार वो जाते हैं।
कमलों से चतु अंगुल ऊपर, रख पग बिहार वो करते हैं।।
हैं भाग्यवान वो ही प्रभुवर, जो आपके साथ में चलते हैं।
पग पग पर कमलों की रचना, यह इन्द्र सभी करवाते हैं।।
जो पुण्यधरा उस पर वाणी, श्री जिनवर जी बिखराते हैं।
अमृत पाकर भव्यों के मन, औ रोम रोम खिल जाते हैं।।
वसु कर्म तत्व बारह भावों का, ध्यान वहां करवाते हैं।
आया विराग दीक्षा लेते, वे मुक्तिपुरी को जाते हैं।।
षट् ऋतुओं के फल फूल सभी, नगरों शहरों में आते हैं।
धूली कंटक वसु कोई नहीं, औ पाप सभी भग जाते हैं।।
वापी तलाब में जल आया, रत्नों के कमल खिलाते हैं।
मारे गोता ज्ञानामृत में, संयम के मोती पाते हैं।।
मुनिवर चलते श्रावक चलते, और देव आर्यिका चलती हैं।
तिर्यंच चले विद्याधर भी, गुण बगिया क्यारी खिलती हैं।।
आगे–आगे है धर्मचक्र, संदेश धरम का देता है।
सारी धरती मंगलमय हो, मंगल सबका कर देता है।।

संतोष सभी जन पाते हैं, औ काम क्रोध कुछ दोष नहीं।
जिनवर का अतिशय बिखर रहा, हिंसा चोरी और भूख नहीं।।
जय जय की ध्वनि करते चलते, मन प्रमुदित हो जय करता है।
हुई प्रभु की जय मेरी होवे, फूलों सें भाव संजोता है।।
चौबीसों जिन का समवशरण, रचना समान ही होती है।
क्रम से योजन घटता जाता, बाकी सब एक सी होती है।।
श्री वृषभनाथ से महावीरा तक, सबको शीश झुकाते हैं।
'स्वस्ति' को हो प्रत्यक्ष दर्श, हम यही भावना भाते हैं।।

शेर चाल (हे दीन बन्धु...)

चऊ कर्म किये नाश तो, अरिहंत बन गये।
जीवों को शरण देने से, तुम नाथ बन गये।।
समभाव से समज्ञान सभी, जीव को दिया।
भव्यों ने आके चरणों में, अमृत का रस पिया।।1।।
धन धान्य सफल हो गया, जिन देव जी मेरा।
पूजा करी जो आपकी, हो भाग्य सबेरा।।
ये हाथ सफल हो गये, और कान भी हुये।
आंखों ने पाया दर्श तेरा ध्यान भी किये।।2।।
श्री आदि ने कैलाश में जा धाम बनाया।
श्री वासुपूज्य चंपापुरी आत्म को ध्याया।।
श्री नेमी ने गिरनार में, मुक्ति को बुलाया।
पावापुरी में वीरा जी ने कमल खिलाया।।3।।
सम्मेद शिखर सिद्ध भूमि सिद्ध हो गये।
शाश्वत बताया यह गिरी, जिन देव हो गये।।
जिन बीस ने निर्वाण गिरी, मोक्ष को पाया।
आकर के भक्त ने यहां पे शीश झुकाया।।4।।
होवे चतुर्थ काल तो, प्रत्यक्ष दर्श हो।
वरना विदेह जाके जिया, पावे हर्ष वो।।
जब श्वांस चले, तेरा नाम गाता मैं रहूँ।
अन्तिम समय में 'स्वस्ति' तेरा ध्यान ही करूँ।।5।।

ॐ ह्रीं समवशरणस्थ चतुर्विंशति जिनेन्द्रेभ्यः गणधर आदि मुनिवरेभ्यो नमः महार्घं निर्वपामीति स्वाहा। (गोला सहित पूर्ण अर्घ चढ़ाना है।)

दोहा

समवशरण जिन देव का, स्वर्ग मोक्ष का धाम।
अर्घ्य समर्पित चरण में, बारंबार प्रणाम।।
।।इत्याशीर्वादः परिपुष्पांजलिं क्षिपेत्।।

माला मंत्र

ॐ ह्रीं समवशरणस्थ चतुर्विंशति तीर्थंकर जिनेंद्रेभ्यः नमः स्वाहा।

प्रशस्ति चौपाई

जिन भक्ति जिन गान किया है, प्रभुवर तेरा ध्यान किया है।
भक्ति मय हो गुण को गायें, पूजन को हम तेरी आयें।।
उत्तम द्रव्य भाव उत्तम हैं, मेरे जिनवर भी उत्तम हैं।
उत्तम जिनवर का मंदिर है, हृदय में मेरे प्रभु मंदिर है।।
समवशरण का पाठ रचाया, समवशरण का दर्शन पाया।
रोम रोम हो गया है हर्षित, जन मन मेरा है आकर्षित।।
भाव विभोर हो रचना कीनी, 'स्वस्ति' जिन भक्ति कर दीनी।
मेरठ में प्रारम्भ किया था, लिख–लिख कर आनंद लिया था।
हरिद्वार में पूर्ण हुआ है, आदिनाथ आशीष लिया है।
सावन वदी सप्तम है प्यारी, द्विसहस्त्र चतु सन है न्यारी।।
समवशरण का पाठ बनाया, जिनवर का गुण गान कराया।
हुई जो भूल सुधार के पढ़ना अच्छा है उसको तुम गाना।
'स्वस्ति' निज कर्त्तव्य निभाऊँ, मुक्ति सुंदरी को ही पाऊँ।।
ॐ शांति शांति शांति।

परम विदुषी लेखिका आर्यिका रत्न 105 श्री स्वस्ति भूषण माता जी द्वारा रचित कृतियां

श्री जिनपद पूजांजलि (विशेष कृति)

विधान संग्रह 1. श्री कल्पद्रुम विधान 2. श्री इन्द्रध्वज विधान 3. श्री सिद्धचक्र विधान 4. श्री सम्यक् विधान संग्रह 5. श्री मनुष्य लोक विधान 6. श्री श्रुत स्कंध विधान 7. श्री चौबीसी विधान 8. श्री नवग्रह शांति विधान 9. श्री कल्याण मंदिर विधान 10. श्री दश लक्षण विधान 11. श्री पंचमेरु विधान 12. श्री ऋषि मंडल विधान 13. श्री कर्म दहन विधान 14. श्री समवशरण विधान 15. श्री चौंसठ ऋद्धि विधान 16. श्री याग मंडल विधान 17. श्री पंच परमेष्ठी विधान 18. श्री पंच कल्याणक विधान 19. श्री वास्तु शुद्धि विधान 20. तीर्थकर विधान संग्रह 21. श्री पंच बालयति विधान 22. श्री सम्मेद शिखर विधान 23. श्री सोनागिर विधान 24. श्री सिद्धक्षेत्र गिरनार विधान 25. श्री आदिनाथ विधान 26. श्री पद्मप्रभु विधान 27. श्री चन्द्रप्रभ विधान 28. श्री विमलनाथ विधान 29. श्री शान्तिनाथ विधान 30. श्री मुनिसुव्रतनाथ विधान 31. श्री नेमिनाथ विधान 32. श्री पार्श्वनाथ विधान 33. श्री महावीर विधान 34. श्री जम्बू स्वामी विधान 35. श्री भक्तामर स्तोत्र विधान 36. श्री वासुपूज्य विधान

काव्य संग्रह 1. मेरी कलम से 2. भजन संग्रह 3. भजन सरिता 4. अमृत की बूंदे 5. श्री सम्मेद शिखर चालीसा 6 बड़ा ही महत्व है 7. आरती ही सारथी 8. जिन ज्ञान किरण 9. भक्ति संग्रह 10. काव्य वाटिका (भाग-1, 2) 11. श्री भक्तामर जी पाठ (हिन्दी) 12. प्रभु भक्ति की पोटली (चालीसा संग्रह) 13. भक्ति पुंज 14. आत्मा की आवाज 15. विनयांजलि

पूजन-संग्रह 1. श्री सम्मेद शिखर टोंक पूजन 2. दीपावली पूजन 3. श्री आदिनाथ पूजन एवं चालीसा (रानीला) 4. श्री आदिनाथ पूजन आतिशय क्षेत्र (चाँदखेड़ी) 5. पद्म प्रभु पूजन (शाहपुर) 6. श्री चंद्रप्रभु जिन पूजन संग्रह (सोनागिर जी) 7. श्री चन्द्र प्रभु पूजा (अतिशय क्षेत्र, तिजारा जी) 8. श्री चंद्रप्रभ चौबीसी जिनालय पूजन (कैराना) 9. श्री वासुपूज्य जिन पूजन संग्रह (सिद्धक्षेत्र चंपापुरजी) 10. शांतिनाथ पूजन (सूर्य नगर) 11. श्री नेमीनाथ पूजन संग्रह (सिद्धक्षेत्र गिरनार जी) 12. श्री पार्श्वनाथ पूजन एवं चालीसा 13. पार्श्वनाथ पूजन (जलालावाद) 14. श्री पार्श्वनाथ पूजन , हांसी अतिशय क्षेत्र 15. अतिशय क्षेत्र बड़ागाँव पूजा 16. श्री महावीर जिन पूजन संग्रह 17. स्वस्ति जिन अर्चना (सिद्ध क्षेत्र पावापुरजी) 18. श्री गोम्टेश्वर बाहुबली स्वामी विनयांजलि 19 कुंदकुंद स्वामी पूजा संग्रह, बारा (राजस्थान) 20. गुरु अर्चना (आ. 108 सन्मतिसागर जी) 21. श्री शांतिनाथ पूजा संग्रह (झालरापाटन) 22. श्री मुनि सुव्रतनाथ पूजन, भजन, चालीसा (जहाजपुर)

गद्य संग्रह 1. दीक्षा कठिन परीक्षा 2. जैन त्यौहार कैसे मनायें? 3. प्रतिक्रमण (किये अपराध जो हमने) 4. स्वस्ति आत्म बोध 5. राग से वैराग्य की ओर 6. मुक्ति सोपान (धार्मिक सांप सीढ़ी) 7. श्री ऋषभदेव अनुशीलन 8. नानी की कहानी (भाग-1,2,3,) 9. प्रभावना प्रवाह (भाग-1, 2) 10. आओ दीपावती पूजन करें 11. दीपावली कैसे मनायें